सबसे आगे सबसे अव्वल....
यह है
लाल-शर
(डाबर बालामृत)
की देन
विजय नहीं हासिल होती है कमजोरों को।
मिलती सदा सफलता जग में रणवीरों को॥
तुम भी आगे बढ़ सकते हो छू सकते हो नभ के तारे।
यदि पियो 'लालशर' ताकतवर टॉनिक रोजाना प्यारे॥
डाबर (डा० एस० के० बर्म्मन) प्राइवेट लिमिटेड कलकत्ता-२६

करारी खबर...
आपके मनपसंद
साठे
पिकनिक
बिस्कुट
अब खूबसूरत और
हवासे बचाव करने वाले
कारटन में मिलते हैं।

White
det
डेट
whitens while it washes clean
डेट साफ़ धुलाई के
साथ साथ सफ़ेदी लाता है
केवल डेट से धुले आपके सफ़ेद कपड़ों में इतनी
रौनक़दार सफ़ेदी और आपके
रंगीन कपड़ों में इतनी निर्मल सफ़ाई आ सकती है।
स्वस्तिक ऑइल मिल्स लि., बम्बई.
Shilpi SOM 8A/68 Hin

चन्दामामा
संचालक : चक्रपाणी
हमारे अनुरोध पर अनेक लेखकों ने अपनी सुंदर रचनाएँ प्रकाशनार्थ भेजीं, उनमें उत्तम रचनाओं का चयन कर हम आगामी अंकों में प्रकाशित कर रहे हैं। लेखकों से यह निवेदन है कि अस्वीकृत हालत में यदि वे अपनी रचनाएँ वापस मँगाना चाहते हैं तो कृपया रचना के साथ पर्याप्त डाक-टिकट संलग्न कर भेजें। तभी अस्वीकृत रचनाएँ वापस भेजी जा सकती हैं अन्यथा नहीं। 'चन्दामामा' को रोचक बनाने सुझावों का स्वागत करेंगे।
वर्ष : २०   दिसम्बर १९६८   अंक : ४
CHITRA

भारत का इतिहास

रणजीतसिंग के बाद सिक्ख राज्य में अराजकता फैल गयी और गद्दी पर कोई भी स्थिर रूप से बैठ न सका। आख़िर १८४३ में दिलीपसिंग नामक नाबालिग लड़के को गद्दी पर बिठाकर राज्य के अधिकार को उसकी माँ रानी झींदान के हाथ सौंप दिया। लेकिन वास्तविक अधिकार खाल्सा सैनिकों के हाथों में था।

खाल्साओं के घमंड को चूर करने के लिए लाहौर की सरकार को आवश्यक हो गया, इसके लिए उचित रास्ता भी मिला। ब्रिटीशवाले भारी पैमाने पर सिक्ख राज्य पर अधिकार करने के प्रयत्न करते से दिखाई दिये। लाहौर की सरकार ने सिक्ख सेनाओं को ब्रिटीशवालों के प्रदेशों पर अधिकार करने भड़का दिया। दिसंबर १८४५ में खाल्सा की सेनाएँ सतलज़ पार कर गयीं। फिर दो दिन बाद वाइसराय हार्डिज ने युद्ध की घोषणा की।

पहला युद्ध मुडकी के पास भयंकर रूप में हुआ। सिक्खों ने अपना अनुपम पराक्रम दिखाया। लेकिन उनके सेनापति लालसिंह की अदूरदर्शिता के कारण उनकी पराजय हुई। नहीं तो उस लड़ाई में जरूर सिक्खों की विजय होती। २१ दिसंबर को फिरोज़शाह नामक स्थान पर जो लड़ाई हुई उसमें अंग्रेज़ सेना बहुत कमज़ोर थी। फिर भी सिखों का नेता तेजसिंग अचानक लड़ाई के मैदान से भाग गया। इसलिए अंग्रेजों की विजय हुई।

१८४६ जनवरी में सिक्खों ने एक बार और सतलज़ को पारकर लुधियाना पर हमला किया। इस लड़ाई में और बाद की लड़ाइयों में भी सिख सैनिकों ने बड़ी वीरता के साथ युद्ध किया। उनके

८६. सिक्ख राज्य का पतन

सेनापतियों की असमर्थता के कारण वे हार गये। (सिक्खों के सेनापतियों में शामसिंग एक ही समर्थ था।) २८ जनवरी को युद्ध में विजय पाने के बाद ब्रिटीश सैनिकों ने कई सिक्खों का वध किया।

भारत में ब्रिटीशवालों का विरोध जितनी तीव्रता के साथ सिक्खों ने किया वैसा किसी ने न किया था। २० फरवरी को ब्रिटीश सेनाएँ लाहौर पहुँचीं। इसके बाद जो संधि हुई उसके अनुसार सिक्खों ने सतलज की बायीं तरफ़ के अपने प्रदेश को अंग्रेज़ों के अधीन कर दिया। काश्मीर और हज़रा अंग्रेज़ों के हाथ में चले गये। सिक्ख सैनिकों की संख्या घटाई गयी। नाबालिग राजा की रक्षा के लिए थोड़ी-सी ब्रिटीश सेना रखी गयी।

इसके बाद ब्रिटीशवालों ने एक नीच कार्य किया है। लाहौर दर्बार के एक सर्दार गुलाबसिंग ने काश्मीर को दस लाख गिनियों में बेचने का एक समझौता किया (१६ मार्च, अमृतसर में)। गुलाबसिंग के विरुद्ध विद्रोह हुआ। इसका प्रधान लालसिंग है। ब्रिटीशवालों ने लालसिंग को अपने पद से ही नहीं हटाया बल्कि पंजाब पर अपने अधिकारों को और मज़बूत बनाते एक और समझौते को लाहौर सरकार पर थोप दिया।

सिक्ख हार गये; लेकिन उनका पौरुष और उनकी स्वतंत्रता की इच्छा मरी नहीं थी। ब्रिटीशवालों का आधिपत्य उनको खटकने लगा। इसके साथ ब्रिटीशवालों ने रानी झींदान पर विप्लव का आरोप लगाकर उसे लाहौर से भेज दिया। इससे सिक्खों का क्रोध और भड़क उठा। इस तरह युद्ध के लिए ललचानेवाले सिक्खों को एक और मौक़ा मिला।

मुल्तान का शासक दिवान मुलराज कर वसूल कर न सका। लाहौर सरकार ने

उस पर बड़ी रक़म का जुर्माना लगाया। उसने नाराज़ होकर मार्च १८४८ में अपने पद से इस्तीफ़ा दिया। उसका पद सरदार खानसिंग को देते हुए दो ब्रिटीश सैनिक अधिकारियों को लाहौर सरकार ने भेजा। ये दोनों २० अप्रैल को मार डाले गये। इसका इलजाम मुलराज पर लगाया गया।

इस बहाने पर ब्रिटीशवाले युद्ध के लिए न आये, बल्कि इस बात के इंतज़ार में थे कि लाहौर सरकार मुलराज की समस्या को कैसे हल करती है, देखें। लेकिन एक छोटे से ब्रिटीश अफ़सर की जल्दबाजी के कारण हालत बिगड़ती गयी। मुल्तान में मुलराज की फौज का सामना करने के लिए हज़ारा गवर्नर छत्तरसिंग ने सेना के साथ अपने पुत्र को भेजा। लेकिन वह (शेरसिंग) मुलराज के दल में मिल गया। प्रमुख सिक्ख नेता भी शेरसिंग के पक्ष में हो गये। इस बार सिक्खों ने अफगानों को पेशावर का लोभ दिखाकर उनको अपने पक्ष में कर लिया।

१० अक्तूबर १८४८ में ब्रिटीशवालों ने सिक्खों पर एक बार और युद्ध की घोषणा की। १६ नवंबर, १३ जनवरी १८४९ को दोनों दलों के बीच युद्ध हुआ। इस युद्ध में ब्रिटीशवाले हारे तो नहीं, लेकिन उन्हें बड़ा नुक़सान हुआ। २२ जनवरी को मुलतान में जो लड़ाई हुई, उसमें अंग्रेज़ जीत गये। मुलराज को काले पानी की सज़ा दी गयी।

लेकिन चीनाब नदी के निकट गुजरात नामक स्थान पर अंग्रेज़ सिक्खों पर विजय प्राप्त कर सकें। इससे सिक्खों का तेज कम हो गया। ब्रिटीशवालों ने पंजाब को अपने अधीन कर लिया। दिलीपसिंग इंगलैंड भेज दिया गया। उसे हर साल पाँच लाख रुपये देने का निर्णय हुआ।

ऐरावत

ब्रह्मदेश के एक नगर में एक बड़ा मशहूर धोबी रहता था। कपड़े साफ़ करने में उसकी होशियारी और कुशलता कहते न बनती थी। वह कपड़े धोता तो चमेली फूल जैसे लगते और किसी धोबी में भी ऐसी प्रज्ञा न थी। इसलिए नगर का हर एक आदमी उसी से कपड़े धुलवाता। सब घरों के कपड़े वह अकेला धो नहीं सकता, इसलिए उस धोबी ने कई धोबियों को नौकरी पर रखा और उनसे काम कराते वह बड़ा धनी हो गया।

धोबी के पड़ोस में एक कुम्हार रहा करता था। धोबी कपड़े धोने में जैसा कुशल था, बर्तन बनाने में कुम्हार वैसा असमर्थ था। इसलिए वह गरीब ही रह गया। वह यह सोचकर चुप रहता तो कोई बात न होती कि मेरा नसीब ही ऐसा है। लेकिन वह कुम्हार नालायक़ दुष्ट था। इसलिए धोबी की संपत्ति को देख वह मन ही मन जलता था। वह किसी भी हालत में ऊपर नहीं उठ सकता। इसलिए वह हर हमेशा यही सोचा करता कि धोबी का सर्वनाश कैसे करें। वह रात-दिन यही सोचा करता था। आख़िर सोचते सोचते उसे एक उपाय सूझ पड़ा।

उस नगर के राजा के पास एक सुंदर हाथी था। वह सब हाथियों की तरह काला था। लोगों का विश्वास था कि इंद्र का हाथी ऐरावत सफ़ेद होता है। राजा सोचने लगा कि अगर उसके पास भी सफ़ेद हाथी हो तो दुनिया कहेगी कि राजा के पास ऐरावत जाति का हाथी है। उसकी यह आशा थी, अगर कोई उसके हाथी को सफ़ेद बना दे तो और सब राजाओं के हाथी इसके सामने तुच्छ होंगे। राजा की यह इच्छा धीरे धीरे सारे देश के लोगों को मालूम हो गयी।

प्रदीप जैन

एक दिन कुम्हार राजभवन में पहुँचा, वहाँ के दर्बानों से बोला–"मैं राजा से एक ख़ास बात का निवेदन करना चाहता हूँ। वह उनके हाथी के बारे में है। इसलिए अन्दर जाने की अनुमति दे।"

राजा ने उसको दर्शन दिये।

"मैंने सुना कि महराज अपने हाथी को सफ़ेद बनवाना चाहते हैं।" कुम्हार ने राजा से पूछा।

"हाँ, यही मेरा उद्धेश्य है। क्या तुम सफ़ेद बना सकते हो?" राजा ने कहा।

"सुनते हैं, हमारे गाँव का बड़ा धोबी कोयले को भी सफ़ेद बनाने की डींग मारता है। असल में वह वैसा आदमी भी है। आपके हाथी को धुलवाकर सफ़ेद करा दे तो कैसा होगा?" कुम्हार ने कहा।

"तुम्हारी बात बड़ी अच्छी है। बड़ा धोबी डींग मारता है। यह सच्ची बात है। इसका फ़ैसला कर देंगे।" राजा ने कहा।

राजा ने तुरंत बड़े धोबी को बुला भेजा। धोबी ने राजमहल की ओर जाते हुए देखा कि उसका पड़ोसी कुम्हार राजमहल से चला आ रहा है। उसने सोचा कि राजा को धोबी और कुम्हारों से क्या काम आ पड़ा है। यह सोचते सोचते वह राजमहल गया।

धोबी जाते ही राजा के सामने साष्टांग दंडवत करने लगा।

राजा ने उससे कहा–"देखो धोबी, हमको मालूम हुआ है कि तुम कहा करते हो कि काली से काली चीज़ों को सफ़ेद किया करते हो। हमारे हाथी को सफ़ेद बनाने का भार तुम पर दे रहा हूँ। मैं सफ़ेद हाथी के लिए बहुत दिनों से ललचा रहा हूँ। तुमको मेरे हाथी को सफ़ेद करना ही होगा।"

ये बातें सुनकर धोबी चकित हो गया। वह जानता था, उसका पड़ोसी कुम्हार ईर्ष्या करनेवाला है। हाथी को सफ़ेद बनाने का विचार राजा के मन में उठा न होगा, बल्कि उनके दिमाग में यह बात कुम्हार ने ही बिठाई हो गयी।

यह सोचकर धोबी ने राजा से कहा। "महराज! आपकी आज्ञा हो तो मैं काले हाथी को सफ़ेद बना सकता हूँ। इस में कौन बड़ी बात है। उसे भी क़पड़ों की तरह धोना होगा। लेकिन मेरे पास जितने भी मिट्टी के हांडे हैं, वे बड़े नहीं हैं। इसलिए अगर आप हाथी के अटने लायक़ बड़ा हांडा तैयार करवा दें तो मैं हाथी को गरम पानी में रखकर धोऊँगा।"

मूर्ख राजा ने धोबी की बातों पर यक़ीन किया और कुम्हार को बुलाकर आदेश दिया। हाथी के अटने लायक़ बड़ा हांडा तैयार करके दो। इस पर कुम्हार चकित रह गया। कह धोबी के गले में जो फंदा डालना चाहता था वह उसीके गले में लग गया। फिर भी राजा की आज्ञा का पालन करना जरूरी था। इसलिए बोला– "महराज, मैं ज़रूर तैयार करूंगा, आप मुझे एक महीने की मियाद देने की कृपा करें।" यह कहकर कुम्हार घर पहुँचा। सभी कुम्हारों की मदद से उसने एक बड़ा हाँडा तैयार करवाया और एक महीने के भीतर ही उसे राजमहल में पहुँचा दिया।

धोबी को बुलवा आया, कुम्हार ने जो हाँडा तैयार किया था उसमें राज भटों ने बड़े प्रयास के साथ हाथी को चढ़ाया। लेकिन हाँड़े में हाथी के पैर रखते ही वह टुकडे टुकडे हो गया।

राजा ने कुम्हार को बुलाकर फिर आदेश दिया–"तुमने हांडा बहुत पतला बना दिया। हाथी के भार को वह संभाल न सका। इस बार तुम मज़बूत हांडा तैयार कर ले आओ।"

कुम्हार की बुद्धि भ्रष्ट हो गयी। क्यों कि राजा की आज्ञा का पालन करना था। इस बार उसने शहर-भर के कुम्हारों को बुलाकर मिट्टी का ढेर लगाया। उससे एक मजबूत और बड़ा हांडा तैयार किया और उसे बड़ी मुश्किल से जलाकर राजभवन में पहुँचा दिया। इस बार हांडा हाथी के बोझ को संभाल सका। लेकिन जब उसमें पानी डालकर नीचे आग लगायी गयी तो बड़ी देर तक पानी गरम न हुआ। गाड़ियों से लदकर लकड़ियाँ आयीं, उनके जलाने से भी कोई फ़ायदा नहीं रहा।

"महराज! इस बार हांडा और मोटा हो गया। इसमें पानी गरम करना किसी से भी संभव न होगा।" धोबी ने कहा।

राजा ने फिर कुम्हार को बुला भेजा और डांटते हुए कहा–"तुमने हांडा इतना मोटा क्यों बनाया? इसमें पानी गरम नहीं होता। इस बार अच्छा हांडा बनवाकर ले आओ। वरना तुम्हारी ख़ैर न होगी।"

कुम्हार और उसके रिस्तेदारों ने मिलकर कई हांडे बनाये। बड़ी मेहनत की। महीनों अपने काम-वाम छोड़ दिये। आख़िर मूर्ख कुम्हार को मालूम हो गया कि हाथी के बोझ को उठाने की ताक़त और पानी को गरम करने लायक़ पतला हांडा बनाना ब्रह्मा के लिए भी संभव नहीं। यह बात उसने राजा को विस्तार पूर्वक समझा दी।

राजा ने हाथी को धुलवाने का प्रयत्न छोड़ दिया। लेकिन कुम्हारों को इस प्रयत्न में बड़ा नुक़सान हुआ और उन्हें अपनी मेहनत का फल भी नहीं मिला। राजा की इस बेवकूफ़ी पर मन ही मन पछताते रह गये!

शिथिलालय

[११]

[जंगल में भालू को देखने के बाद शिखिमुखी और नागमल्ली को एक विचित्र आदमी दिखाई पड़ा ; उसने अपना नाम सवर गीध बताया और उनको साथ लेकर पुजारी के पास चला गया। जब वे पहाड़ पर चढ़ रहे थे तब विक्रमकेसरी उनकी ओर दौड़ता आया और चिल्लाकर कहा कि उसने पुजारी की गुफा देख ली है। बाद...]

विक्रमकेसरी को अपनी ओर दौड़ते आते देख शिखिमुखी को मालूम हो गया कि उसने शिथिलालय के पुजारी को पकड़ने के लिए जो योजना बनायी, वह बेकार गयी। विक्रमकेसरी की चिल्लाहट उस दुष्ट ने सुनी होगी। इसमें संदेह नहीं। पुजारी को यह मालूम हो गया होगा कि वह मीठी बातों से नागमल्ली और शिखी को धोखा देकर अब ले जाना मुश्किल है, क्योंकि विक्रमकेसरी भी उनकी मदद के लिए आ पहुँचा है। अब क्या करना होगा? पुजारी के अनुचर सवर गीध को बंदी बनावे तो पुजारी उसकी मदद करने आ सकता है। तब...

शिखिमुखी ने यह सोचकर विक्रमकेसरी की ओर हाथ हिलाया और नागमल्ली से कहा—"नागमल्ली! देखो, सावधान रहो। उस सवर गीध को भागने न दो, मीठी

बातों से उसे रोक रखो। मैं विक्रम केसरी को एक जरूरी बात बताकर आ जाता हूँ।"

नागमल्ली स्वीकृति सूचक सर हिलाकर जल्दी-जल्दी सवर गीध की ओर दौड़ पड़ी। इतने में पहाड़ पर से पुजारी ज़ोर से चिल्ला उठा-" सवर गीध! तुम लापरवाह मालूम होते हो, खबरदार! उन लोगों से बचने की कोशिश करो। लो यह कर्म-पाश! उसे पकड़कर आसमान पर उड़ो।"

शिखिमुखी उन बातों को सुनते ही, सावधान हो गया और वह सवर गीध की ओर घूमकर उसे फिर पकड़ने दौड़ने लगा, तब पहाड़ पर से एक काली रस्सी तेजी से आकर सवर गीध के आगे आ गिरी। सवर गीध जल्दी-जल्दी उसे अपनी कमर में लपेट कर चिल्ला पड़ा-"पुजारी देव! यह सवर गीध आकाश में उड़ने को तैयार है। आपकी आज्ञा क्या है? मैं उसका तुरंत पालन करूँगा।"

दूसरे ही क्षण सवर गीध रस्सी की मदद से हवा में ऊपर उठा। पकड़ने के लिए नागमल्ली और शिखीमुखी के साथ विक्रमकेसरी भी दौड़ पड़ा। लेकिन तब तक सवर गीध हवा में पांच-छे आदमियों की ऊँचाई तक ऊपर उठ चला था। विक्रमकेसरी दांत पीसते धनुष-बाण ले तीर छोड़ने की कोशिश करते बोला-"अरे, पुजारी का सेवक, तुम्हारी मौत निश्चित है। अब तुम मरने के लिए तैयार हो जाओ।"

शिखिमुखी के मन में हठात् कोई विचार आया, उसने सर हिलाते विक्रमकेसरी को तीर छोड़ने से रोक दिया और कहा- "विक्रम, जल्दबाज़ी न करो, उस सवर गीध को मार डालने से हमें फायदे के बदले नुक़सान ही ज्यादा होगा। उसे बचा रखने से हमारा काम बनेगा।"

"वह उस दुष्ट पुजारी का सेवक है। वह भी दुष्ट है।" विक्रमकेसरी ने क्रोध से कहा।

"वह दुष्ट का सेवक है, मगर दुष्ट नहीं है। केवल भोला आदमी है। नशे में वह समझता है कि आकाश में उड़ सकता है। ऐसे मोटे दिमागवाले को कोई भी अपनी खुदगर्जी के लिए इस्तेमाल कर सकता है। वह जिन्दा रहकर पुजारी की सेवा में ही रहे, भविष्य में वह हमारे लिए उपयोगी होगा!" शिखिमुखी ने कहा।

"आगे कभी की बात क्यों? उस पुजारी की गुफा पर निगरानी रखने दो शबरों को पहरे पर रखा है। एक और आदमी पेड़ों पर उड़ने जानेवाले भालू के रहस्य का पता लगाने चला गया है। हम बिना विलंब के पुजारी की गुफा को घेर लेंगे।" विक्रमकेसरी ने कहा।

"तुम्हारी चिल्लाहटों और सवर गीध के भाग जाने से पुजारी अब तक समझ गया होगा कि हमारा प्रयत्न क्या है?" शिखिमुखी ने कहा। इसके बाद उसने भालू को मारने की घटना से लेकर सारी बातें सुनाकर सवर गीध का दिया हिरण का चर्म उसे दिखाया। उस पर खुदे दृश्यों को देख विक्रमकेसरी संभ्रम और आश्चर्य में डूब गया। वह उसे निर्निमेष देखता ही रह गया।

"इस चर्म पर के चित्र हमें ब्रह्मपुत्र की घाटियों में प्रवेश करने पर आगे के अन्वेषण में मदद देंगे। उसे तुम अपने ही पास रखो, विक्रम।" शिखिमुखी ने कहा।

विक्रमकेसरी उस हिरण के चर्म को पहले की भांति लपेट कर, उसे रस्सी के साथ कमर में बांध दिया। इतने में एक शबर आकर बोला—"विक्रम साहब! वह जादूगर एक और आदमी के साथ गुफा में पहुँच कर बड़ी देर तक बात कर रहा था। भीतर शायद रोशनी के वास्ते वे लोग कुछ जला रहे थे। गुफा का द्वार धुएं से भर गया था।"

उसने पहले ही पुजारी की गुफा देख ली थी। इसलिए ढूंढने की उन्हें बिलकुल ज़रूरत न पड़ी।

थोड़ी देर बाद जब वे गुफा के निकट पहुँचे तब गुफा का मुख-भाग धुएँ से भरा हुआ था। उस धुएँ को देखते ही शिखिमुखी ने कहा—"वह दुष्ट भीतर नहीं है। ऐसे धुएँ में कोई भी प्राणी ज़िन्दा नहीं रह सकता।"

"तब तो क्या वह बचकर यहाँ से भाग निकला है?" विक्रमकेसरी ने निराश होते हुए पूछा।

शिखिमुखी के जवाब देने के पहले उनके साथ रहनेवाले एक शबर ने ऊँचे पहाड़ पर खड़े होकर चिल्लाते हुए कहा—"साहब धुआँ यहाँ से ही नहीं गुफा के पीछे से भी दो-तीन जगह आ रहा है।"

"इसका मतलब उस दुष्ट के भाग जाने के लिए कुछ और गुप्त मार्ग है। विक्रमकेसरी ने जिन दो शबरों को पहरे पर रखा था, वे क्या कर रहे हैं? सो रहे हैं या उनको भी पुजारी अपने कंधे पर डाल कर उठा ले गया है।" नागमल्ली ने कहा।

शिखिमुखी अपने क्रोध को रोकते हुए बोला—"उस बदमाश ने शबरों को ही नहीं

"गुफा में उन लोगों ने रोशनी के वास्ते नहीं जलाया। हमारी आँखों में धूल और धुआँ झोंककर वहाँ से भागने के लिए ही। मुझे यक़ीन नहीं है कि वह हमें मिलेगा। फिर भी क्या हम कोशिश करके देखें विक्रम?" शिखिमुखी ने कहा।

"वह क्यों नहीं मिलेगा? गायब थोड़े ही होगा? वह आसमान पर उड़नेवाला भूत थोड़े ही है।" नागमल्ली ने व्यंग्य से कहा।

"नागमल्ली ने बड़ा अच्छा कहा है। शिखी! अब हम यहाँ से निकले।" यह कहते विक्रमकेसरी आगे आगे चलने लगा।

सवरों को भी गधे बनाया। अब हमें बड़ी होशियारी के साथ व्यवहार करना होगा। विक्रम! तुमने जिन शबरों को पहरे पर रखा था, वे दोनों पुजारी का पीछा करते गये होंगे।" यह कहकर शिखिमुखी ने वहाँ के पेड़ से एक छोटी-सी टहनी तोड दी और गुफा के द्वार पर जोर से फेंका। उस हवा से सारा धुआँ तितर-बितर हो गया। इतने में विक्रमकेसरी ने गुफा के भीतर दो-तीन बाण छोड़े। भीतर से किसी तरह की आवाज़ न आयी।

शिखिमुखी यह सोच रहा था कि अब क्या करना चाहिए। इतने में गुफा के ऊपर से नागमल्ली तालियाँ बजाते हुए ज़ोर से चिल्ला उठी। उसको गुफा के पीछे नीचे की ओर एक घाटी में पुजारी और सवर गीध जाते हुए दिखाई पड़े। उनके पीछे पत्थरों की ओट में छिपते दो आदमी चले जा रहे थे। नागमल्ली ने सोचा कि वे दोनों विक्रमकेसरी के भेजे हुए पहरेदार शबर होंगे। नागमल्ली की चिल्लाहट सुनकर उनमें से एक ने पीछे घूमकर देखा, दूसरे के कान में कुछ कहा और जल्दी-जल्दी पहाड़ पर चढ़कर गुफा की ओर आने लगा।
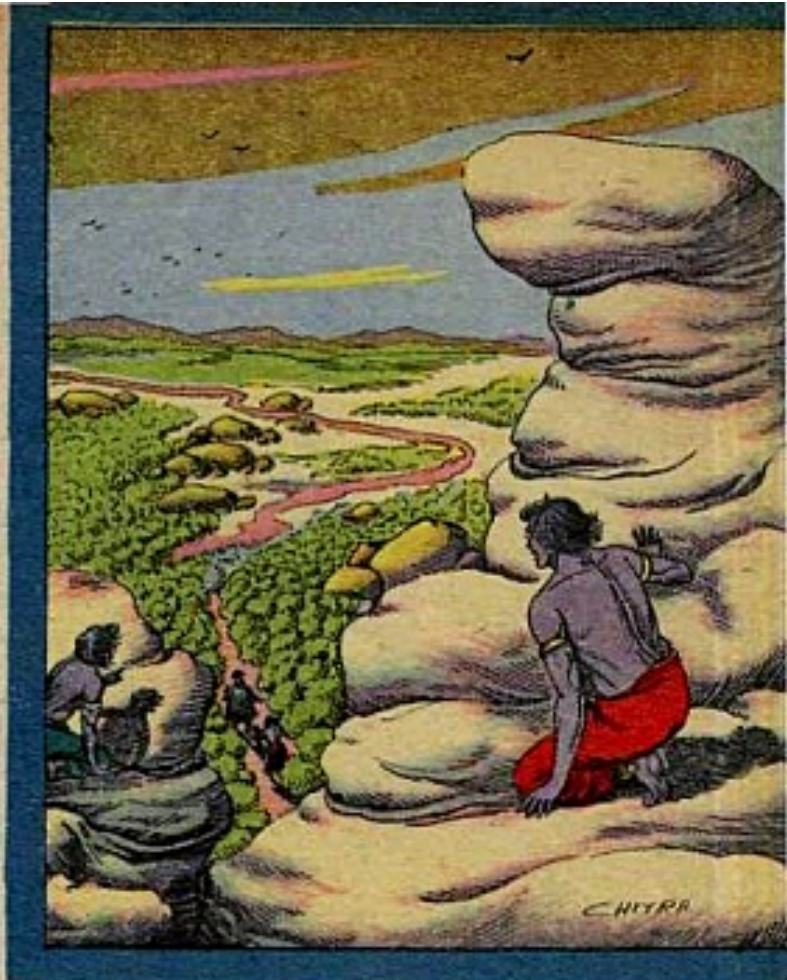
नागमल्ली शिखिमुखी और विक्रम से पुजारी को देखने की बातें सुनानी चाहती थी। इतने में शिखिमुखी, विक्रमकेसरी और उसके साथ का शबर भी गुफा के ऊपर चढ़ आये और नीचे घाटी की ओर देखा। उन्हें अपनी ओर आनेवाले शबर के साथ घाटी में उतरनेवाले शिथिलालय का पुजारी भी दिखाई दिया।

"शिखी! उस पुजारी का पीछा करके उसको पकड़ना हमें कोई कठिन काम नहीं है। अब देरी न करो। जल्दी-जल्दी चलो।" विक्रमकेसरी ने बड़े उत्साह में आकर कहा।

"मुझे भी ऐसा ही लगता है। लेकिन नागमल्ली क्या कहेगी?" यह कहते शिखिमुखी ने तिरछी नज़र से नागमल्ली की ओर देखा।

"अगर वह हमारे हाथ में न आया तो तीर चलाकर उसे मार डालेंगे। हाथ में आकर भी हमसे लड़ने की अगर वह कोशिश करेगा तो भाला चुभो चुभो कर उनकी जान लेंगे। अच्छा चलिये।" यह कहकर नागमल्ली गुफा के ऊपर से नीचे की ओर उतरने लगी।

नागमल्ली की हिम्मत का उन्हें पहले परिचय न होता तो शिखिमुखी और विक्रमकेसरी इन बातों को केवल गप्पे समझते, लेकिन उन दोनों को उसकी हिम्मत और ताक़त का पहले से ही परिचय था फिर भी वे यह मानते थे कि उसे बचाने की जिम्मेदारी उन पर है, यह सोचकर वे दोनों ओर रहकर उसे ख़तरे से बचाना चाहते थे। उनमें किसी को भी यह मालूम न था कि न मालूम किस क्षण में शिथिलालय का पुजारी क्या कर बैठेगा? इसलिए वे चौकन्ने हो चलते रहें।

शिखिमुखी आगे रहकर चल रहा था, बाक़ी तीनों उनके पीछे तेजी के साथ घाटी में उतरने लगे। उनकी दृष्टि शिथिलालय के पुजारी पर केंद्रित थी। उन लोगों ने सोचा कि वह उनकी आंखों में धूल झोंककर पत्थरों की ओट में भाग न जाय। लेकिन पुजारी बड़ी निड़रता के साथ धीरे से घाटी में उतर रहा था। उसने एक-दो बार सर घुमाकर शिखिमुखी और उसके दल की ओर देखा और हाथ हिलाते हुए सवर गीध से कहा।

"उस दुष्ट की चाल देखते रहने से मुझे कुछ संदेह हो रहा है, विक्रम! उसने हमसे बचकर भागने की किसी तरह की कोशिश न की, बल्कि इस तरह जा रहा

है मानो उसे ज़रा भी डर नही है।" शिखिमुखी ने कहा।

"घाटी में शायद उसकी ब्रह्मराक्षस-सेना हो, कौन जाने!" नागमल्ली ने मज़ाक करते हुए कहा।

"अगर हो...तो लट्ठूसिंह की लड़की अकेली ही उनको हरा देगी। हमें किसी तरह का डर नहीं है, विक्रम।" शिखिमुखी ने कहा।

ये बातें सुनकर विक्रमकेसरी ज़ोर से हंस पड़ा। इतने में शबर पहरेदारों में से दूसरा उनके पास आया और उन्हें सारी बात बतायी कि पुजारी गुफा के एक दूसरे रास्ते से कैसे बाहर निकला और वह उससे बचते हुए घाटी में उसका पीछा करते हुए कैसे गया-आदि सभी बातें सुनाई।

"तुम्हारे पास ढेलबांस हैं न? इस वक़्त तुम्हारे भाले से भी इसका उपयोग ज़्यादा मालूम होता है। अगर वह हमारे हाथ में न आया तो ढेलबांस से पुजारी को नीचे गिराना होगा।" विक्रमकेसरी ने उस शबर से कहा।

शबर भाले को कंधे पर रखकर ढेलबांस में पत्थर रखे उसे हिलाते हुए चलने लगा। इतने में पुजारी पहाड़ से उतरकर सामने वाले मैदान में पहुँचा। शिखिमुखी ने अपने साथ चलनेवालों को जल्दी चलने की चेतावनी दी और दौड़ते हुए पहाड़ से उतर कर मैदान में जा पहुँचा, फिर चिल्ला उठा–"अबे चोर पुजारी, ठहरो! भागने की कोशिश करोगे तो तुम्हारी मौत निश्चत है।"

शिथिलालय के पुजारी ने पीछे घूमकर देखा और कहा–"देखो! मैं अर्ध चंद्राकार वाली शिलाओं के पास जाकर ठहर जाता हूँ। तुम लोग आराम से आ जाओ। मैं वहाँ तुम्हारा इंतज़ार करूँगा; फिर बात कर लेंगे।" (अभी है)

भयंकर हत्या

हठी विक्रमादित्य वृक्ष के पास पुनः लौट गया, पेड़ पर से लाश उतारकर कंधे पर डाल सदा की भांति मौन श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने यों कहा–"राजन्, तुम जो श्रम उठा रहे हो, उसे अमांगलिक न समझो। क्योंकि कभी कभी अशुभ के द्वारा ही शुभ परिणाम प्राप्त होते हैं। उदाहरण के रूप में मैं तुमको कल्याणी नामक एक वैश्य लड़की की कहानी सुनाता हूँ, सुनो।"

बेताल यों कहने लगा–

प्राचीन काल में कांचीपुर में कल्याणी नामक एक अनुपम सुन्दरी वैश्य परिवार की कन्या थी। उसके साथ विवाह करने को बड़े प्रतिष्ठित व धनी भी आगे आये, लेकिन उसका पिता एक कठिन बीमारी का शिकार हो बहुत समय तक चारपाई पर पड़ा रहा, आखिर मर गया। दूसरा कारण

यह है कि कल्याणी अमरगुप्त नामक एक वैश्य युवक से प्यार करती थी। वह युवक भी उस कन्या से प्यार करता था और उचित मौक़ा मिलने पर अपने पिता की अनुमति लेकर उस कन्या से विवाह करना चाहता था।

पिता की मृत्यु के बाद कल्याणी का मामा प्रचन्ड गुप्त उसका संरक्षक बना। प्रचण्ड गुप्त जुआखोर तथा पियक्कड था। जब से वह कल्याणी का संरक्षक बना, तब से उस कन्या के पिता का धन पानी की तरह खर्च करने लगा। लगता था कि वह धन भी जल्द समाप्त हो जाएगा।

उस समय प्रचण्ड गुप्त को एक अच्छी बात सूझी कि कल्याणी के साथ प्यार करनेवाले अमर गुप्त का पिता करोड़पति है। कल्याणी अगर उस करोड़पति की बहू बनेगी तो उसके द्वारा वह मन चाहा धन वसूल कर सकता है।

"तुम बेफ़िक्र रहो। तुम्हारा विवाह अमरगुप्त के साथ में न करूँ तों और कौन करेगा?" प्रचण्ड गुप्त ने कल्याणी से कहा।

एक दिन प्रचण्ड गुप्त अमर गुप्त के पिता वीरेन्द्रगुंप्त के पास गया और बोला—"आप जानते ही हैं कि मेरी भानजी कल्याणी असाधारण सौंदर्यवती है। वह अनेक राजकुमारों को छोड़ आपके पुत्र अमर गुप्त के साथ विवाह करने का निश्चय कर हठ किये बैठी है। मेरे सुनने में आया है कि आपका पुत्र भी कल्पाणी से विवाह करने की इच्छा रखता है। इसलिए अगर आप मान जायेंगे तो उन दोनों का विवाह करके उनके जीवन को सुखमय बनायेंगे।"

इस पर वीरेन्द्र गुप्त ने जवाब दिया—"किसी भी हालत में मैं आपकी भानजी को अपनी बहू नहीं बनाऊँगा। आपको और विशेष रूप से समझाने की जरूरत नही।"

वीरेन्द्र गुप्त स्वभावतः लोभी है। कल्याणी के पास संपत्ति के नाम पर कुछ है ही नहीं, इसलिए ऐसी बहू को लाना उसे बिलकुल पसंद नहीं है। अलावा इसके वह प्रचण्डगुप्त से घृणा करता है, वास्तव में प्रचण्ड गुप्त घृणा का पात्र ही है।

वीरेन्द्र गुप्त के कल्याणी को अपनी बहू बनाने से इनकार करने के कारण प्रचण्ड गुप्त की योजना बेकार गयी। कल्याणी के प्रेम का विफल होने की उसे चिंता नहीं, उसके भविष्य के भग्न होने की बड़ी चिंता प्रचण्ड गुप्त को सताने लगी। प्रचण्ड गुप्त स्वभाव से दुष्ट था। इसलिए उसने अपने मन में एक और विचार किया। कल्याणी को वीरेन्द्र गुप्त द्वारा अपनी बहू स्वीकार कराने की उसने एक और योजना की। इस योजना को सफल बनानी है तो उसे कल्याणी की मदद की जरूरत है। इसलिए प्रचण्ड गुप्त ने एक दिन कल्याणी से गुप्त रूप में कहा–

"देखो, कल्याणी! वीरेन्द्र गुप्त ने अपने पुत्र के साथ तुम्हारी शादी करने से इनकार करके तुम्हारी आशा पर पानी फेर दिया। इस पर तुम जितनी दुखी होती हो, उससे दस गुने ज्यादा मैं दुखी हूँ। तुम्हारे सुख की चिंता मुझे छोड़ और किसे होगी?

तुम्हीं बताओ! सुनो, चाहे दुनिया उलट जाय, तुम्हारी शादी अमर गुप्त के साथ अवश्य करूँगा। इसके लिए मैंने एक उपाय सोच रखा है, इसमें तुम्हारी मदद की बड़ी ज़रूरत है।"

"वह मदद कैसी?" कल्याणी ने कहा।

"आज तुम वीरेन्द्र गुप्त के पास जाकर उनसे कह दो कि मैं आज रात को उनकी हत्या करने के प्रयत्न में हूँ। प्रति दिन उनके सोनेवाली चारपाई पर मनुष्य के रूप में दीखने के लिए तकिये वग़ैरह लगाने को कह दो। मैं आधी रात के वक़्त उनके घर में प्रवेश कर उसके खाट पर के तकियों में छुरी भोंक दूँगा। वीरेन्द्र गुप्त पहले से ही सावधान रहेंगे। इसलिए वे मुझे पकड़ लेंगे। मैं भी आसानी से उनके हाथ आऊँगा, पश्चात्ताप करने का अभिनय करूँगा। तुम आकर वीरेन्द्र से प्रार्थना करो कि मेरी जान बचावें। तुमने उनकी जान बचायी, यह सोचकर कृतज्ञता के भाव से वे मुझे छोड़ देंगे। जब तुम उनसे यह कहोगी कि मैंने तुम्हारे सुख के ही वास्ते यह जघन्य कार्य किया है, तब उनकी तुम पर सहानुभूति पैदा होगी और तुमको अपनी बहू बनायेंगे। अगर मुझे सज़ा मिलेगी तो मामूली सज़ा मिलेगी। मैं तुम्हारे वास्ते यह सजा भोग सकता हूँ।" प्रचण्ड गुप्त ने कहा।

"आपकी इच्छा, मामाजी!" कल्याणी ने कहा।

उस दिन कल्याणी घर से तो निकली, पर वीरेन्द्रगुप्त के घर की तरफ़ नहीं गयी। उसने प्रचण्डगुप्त की योजना में अपने पात्र का अभिनय नहीं किया।

उस रात को प्रचण्डगुप्त ने वीरेन्द्रगुप्त के शयनागार में प्रवेश कर चारपाई पर लेटे वीरेन्द्र की पीठ में छुरी भोंक दी। उसकी कराहट सुनकर उसका मुँह सफ़ेद पड़ गया।

वीरेन्द्र के नौकरों ने प्रचण्ड को पकड़ लिया। इसके बाद राजा ने प्रचण्डगुप्त पर हत्या का अभियोग लगा कर उसे मौत की सज़ा दी। इन्साफ़ के समय प्रचण्ड ने अपनी योजना प्रकट नहीं की। वह जानता था कि उस पर कोई यक़ीन न करेगा।

कुछ समय बाद कल्याणी और अमरगुप्त का विवाह संपन्न हुआ। वे बहुत समय तक सुखपूर्वक रहें।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा–"राजन्, मेरा संदेह है कि कल्याणी ने वीरेन्द्रगुप्त को क्यों सावधान नहीं किया? क्या वीरेन्द्र की मौत का कारण वह नहीं बनी? इस संदेह का समाधान जानते हुए भी न बताओगे तो तुम्हारा सर टुकड़े-टुकड़े हो जायगा।"

इस पर विक्रमादित्य ने जवाब दिया–"प्रचण्डगुप्त की योजना दुष्टतापूर्ण है। ऐसी पद्धति में वह अपने प्यारे व्यक्ति के साथ विवाह करना चाहती तो अनेक प्रकार की योजनाएँ स्वयं कर सकती थी। अलावा इसके प्रचण्ड का यह भ्रम मात्र था कि उसकी योजना के ज़रिये वीरेन्द्र का दिल बदल जायगा। वीरेन्द्र लोभी है और वह प्रचन्ड से घृणा करता है। उसके मन में कल्याणी के प्रति किसी प्रकार का बुरा विचार नहीं है। प्रचण्ड की योजना चल निकलने पर भी उसकी कठिनाइयाँ दूर न होंगी। उल्टे प्रचण्ड के प्रति घृणा का भाव और बढ़ेगा। इसलिए कल्याणी ने उस योजना में भाग नहीं लिया। इससे उसे पूरा लाभ प्राप्त हुआ। उसके द्वारा धन कमाने की इच्छा रखनेवाला मामा तथा उसे बहू न बनाने की क़सम खानेवाला ससुर–दोनों हट गये।"

राजा का इस प्रकार मौन-भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पुनः पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

विदूषकी

एक राजा के तीन सुंदर कन्याएँ थीं। बचपन में ही उन कन्याओं की माँ का देहांत हो गया था। इसलिए राजा ही स्वयं उनके सुख-दुखों का ख्याल रखता था। एक दिन राजा को अपने दुश्मन से लड़ने जाना पड़ा। इसलिए राजमहल के पास में ही रहनेवाली एक औरत को बुलाकर राजा ने उससे कहा–"मेरे युद्ध से लौटने तक मेरी बेटियों को प्रसन्न रखने की कोशिश करो।" वह औरत विदूषकी थी।

राजा के युद्ध में जाते ही विदूषकी ने राजमहल को अपना निवास बनाया। वह राजकुमारियों को हँसी आनेवाली कहानियाँ सुनाकर, विनोदपूर्ण गीत गाकर, उनका समय आनंद में बिताने में मदद देती थी।

लेकिन बात यह थी कि विदूषकी को प्रसन्न रखना राजकुमारियों के लिए बड़ा कठिन हो गया। उसे राजभवन क़ैदखाने की तरह लगने लगा। वह सोचने लगी कि कहीं भाग जाय तो अच्छा होगा!

इसलिए एक दिन विदूषकी राजा के बगीचे में घूम आने की बात कहकर चली गयी। बड़ी देर तक नहीं लौटी। राजकुमारियाँ बिना भोजन किये उसका इंतज़ार करने लगीं। खाने की सारी चीज़ें ठण्डी हो गयीं।

बड़ी देर करके विदूषकी लौट आयी।

"अब तक कहाँ रही, फूलमती? हम तुम्हारे इंतज़ार में बिना खाये बैठी हैं।" राजकुमारियों ने पूछा।

"राजमहल में मेरी साँस फूल जाती है, दम घुटने लगता है। इसलिए ज़रा हवा खाने गयी। मेरा इंतज़ार न करो! जब भी मेरी इच्छा होगी, मैं बाहर घूमने चली जाऊँगी, जब मन लगेगा, तब लौटकर जो कुछ होगा, वही खाऊँगी।" फूलमती ने कहा।

वीरेन्द्र पाटिल

उस दिन से लेकर विदूषकी रोज़ शाम को बगीचे में जाती, अपनी इच्छा से लौटती। इस तरह घूम आने पर वह और सुन्दर कहानियाँ सुनाती जिससे राजकुमारियाँ हँसते-हँसते लोटपोट हो जातीं। इसलिए राजकुमारियाँ विदूषकी को टहलने जाने से रोकती न थीं।

एक दिन सवेरे नींद से जागते ही विदूषकी ने अपने मन में सोचा–"मैं रोज बगीचे में जाती हूँ, लेकिन किसी भी दिन मैंने पूरे बगीचे को नहीं देखा है। आज जाकर मुझे देखना है कि और क्या क्या चीज़ें देखने को हैं।"

यह सोचकर वह उद्यान के दूसरे सिरे तक चलती गयी। उसके अंत में एक पत्थर के फलक पर उसके पैर पड़ते ही वह हिला-सा मालूम पड़ा। उसको उठाकर देखा तो नीचे सीढ़ियाँ थीं।

"यह तो बड़ा विचित्र है!" यह सोचते विदूषकी सीढ़ियाँ उतरकर नीचे चली गयी। सीढ़ियों के समाप्त होते ही उसके सामने एक और राजभवन दिखायी दिया। उस महल के दर्वाज़े पर पहुँचकर चिल्ला उठी–"कौन है रे, भीतर?" कोई जवाब नहीं मिला। वह दर्वाज़ा ढकेलकर भीतर चली गयी। भीतर रसोई घर में उसकी उम्र का एक आदमी रसोई बनाते दिखायी पड़ा।

"क्यों भैया? क्या बात है?" विदूषकी ने पूछा।

"यहाँ कैसे आयी हो?" रसोइया ने पूछा।

"मेरी क़िस्मत खींच लायी है। यह सब रसोई किस लिए बनाते हो?" विदूषकी ने पूछा।

"तीन राजकुमारों के लिए। मेरे मालिक हैं। बहुत सुंदर राजकुमार हैं।" रसोइया ने कहा।

लंबी कलछी लेकर निकालने लगा। विदूषकी ने उसके पीछे जाकर रसोइया को बर्तन में ढकेल दिया। अपनी करनी पर मन ही मन हँसते वह राजकुमारियों के पास उसी रास्ते लौट गयी। उसने जब राजकुमारियों को वह कहानी सुनायी तो राजकुमारियाँ हँसते-हँसते लोटपोट हो गयीं।

शाम को राजकुमार शिकार से लौट आये। उन्हें भूख सता रही थी। रसोइये की उन लोगों ने खोज की। वह कहीं दिखायी न पड़ा। आखिर उन्होंने देखा, रसोइया बर्तन में औंधे मुंह पड़ा है।

"अबे, इस बर्तन में तुम कैसे गिरे?" उसको बाहर खींचते राजकुमारों ने पूछा।

"शहद निकालने गया और गिर पड़ा।" रसोइये ने जवाब दिया।

रसोइये ने नहा-धोकर राजकुमारों को खाना परोसा। राजकुमार भोजन करके सो गये, दूसरे दिन सवेरे फिर शिकार खेलने चले गये।

राजकुमारों के जाते ही विदूषकी फिर हँसते हुए आ पहुँची।

"तेरा मुँह जल जाय! तू फिर आ गयी?" रसोइये ने गुस्से में आकर कहा।

"ओहो, ऐसी बात! राजकुमार कहाँ?" विदूषकी ने पूछा।

"शिकार खेलने गये हैं।"

"अच्छा, तब तो मुझे थोड़ा खाना खिला दो, भूख से परेशान हूँ।" विदूषकी ने कहा।

रसोइया ने उसे खाना दिया। खाने के बाद विदूषकी ने पूछा—"ज़रा शहद हो तो दे दो न!"

"आदम क़द के उस बर्तन में थोड़ा शहद बचा है। अभी देखता हूँ।" यह कहते रसोइया भण्डार घर में पहुँचा और छे फुट ऊँचे उस बर्तन में झाँककर देखा,

"अबे, नाराज़ क्यों होते हो? मैंने तुमको जान-बूझकर थोड़े ही ढकेल दिया है? तुम गिर गये तो निकालना मुझसे कैसे बनेगा?" विदूषकी ने कहा ।

"देख, आगे फिर कभी ऐसा न करना, समझी!" रसोइये ने उसकी आँखों में देखते हुए कहा ।

"छी, छी! तुम यह क्या कहते हो? भला मैं बार-बार क्यों करूँगी! मुझे पेट-भर खाना नहीं मिलता है ।" विदूषकी ने कहा ।

रसोइये ने उसे खाना खिलाया । "सुनो तो, तुम्हारे मालिक कब आते हैं? तुमको उनके आने की खबर कैसे लगती है?" विदूषकी ने पूछा ।

"देखने से मालूम होता है और कैसे?" रसोइये ने कहा ।

"कहाँ से देखते हो? कैसे देखते हो?" उस औरत ने तिरछी नज़र से देखते पूछा ।

रसोइया उस औरत को महल के ऊपर ले गया । वहाँ पर एक ऊँचा बुर्ज़ और गवाक्ष दिखाकर बोला—"इसमें से देखता हूँ ।"

"झूठ बोलते हो! यह खिड़की इतनी ऊँची है! उसमें से तुम कैसे देख सकते हो?" औरत ने मज़ाक किया ।

"देखो, वह सीढ़ी है न? उसे लगाकर उस पर चढ़कर देखता हूँ।" रसोइये ने भोलेपन में आकर कहा।

"सीढ़ी चढ़कर जरा देखो तो। वे आकर अगर मुझे देखेंगे तो मेरी जान की खैर न होगी!" औरत ने कहा।

रसोइये ने खिड़की के छोर को अपने हाथों से पकड़कर बाहर झाँका। झट विदूषकी ने सीढ़ी हटा दी। जल्दी-जल्दी नीचे जाकर सब बर्तनों में थोड़ा थोड़ा नमक मिलाया और राजकुमारियों के पास वापस चली गयी। विदूषकी ने उस घटना में नमक-मिर्च लगाकर ऐसी सुनायी कि राजकुमारियों के हँसते-हँसते पेट में बल पड़ गये।

मगर रसोइया खिड़की पर लटकते अपनी क़िस्मत पर राजकुमारों के लौटने तक रोता रहा।

राजकुमारों ने सारे महल में रसोइये को ढूँढ़ा। आखिर बुर्ज पर उसे लटकते देख पूछा—"अरे, तुम वहाँ तक कैसे चढ़ गये?"

"कैसे चढ़ा, बता दूँ? आप लोगों को देखने सीढ़ी लगाकर ऊपर चढ़ा, लेकिन सीढ़ी फिसलकर गिर गयी।" रसोइये ने जवाब दिया। फिर राजकुमारों के सीढ़ी लगाने पर वह उतर आया।

राजकुमार भोजन करने बैठे। भोजन में इतना ज्यादा नमक पड़ा था कि वे खा न सके। रसोइये को डाँटते बोले—"अबे, तुम्हारा सर चढ़ता जा रहा है। तुमको क्या हो गया है? बर्तन में गिरते हो। खिड़की से लटकते हो, खाने में नमक मिलाते हो! ऐसा ही करोगे तो तुम्हें गर्दन पकड़कर निकाल देंगे।"

इस पर रसोइया रो पड़ा। राजकुमारों को फिर खाना बनाकर खिलाया। वे खाकर सो गये। दूसरे दिन सवेरा होते ही

शिकार खेलने जाने के पहले राजकुमारों ने रसोइये से पूछा—"सच्ची बात बताओ! तुमको क्या हो गया है! पागल तो नहीं हुए?"

"यह सब उस औरत का काम है, सरकार!" रसोइये ने पहले से सारी कहानी सुनायी। फिर बोला—"इस बार वह आ जायगी तो उसका गला घोंट दूंगा।" वह अपना क्रोध दिखाने लगा।

"ऐसा काम मत करना। आज हम लोग शिकार खेलने नहीं जायेंगे। हम छिपे रहेंगे। पता लगायेंगे, वह शैतान कहाँ से आती है। क्यों यह शैतानी करती है? उसे सज़ा देंगे।" राजकुमार यह कहकर एक बड़ी अलमारी में जा छिपे।

थोड़ी देर बाद वह विदूषकी आयी और बोली—"कैसे हो जी! खाना हो गया?"

"तेरा सर फोड़ दूंगा। मुझे शैतान की तरह पकड़कर क्यों सताती हो? मैं अपने मालिकों को मुँह दिखाने लायक़ न रहा।" रसोइये ने अपना आक्रोश प्रकट किया।

"उफ़! बस यही बात है! मैं यह सब काम राजकुमारियों का मनोरंजन के लिए करती हूँ। बेचारी, उनको न मनोरंजन मिलता है, न हँसी-ठट्ठे! विनोद बिलकुल

न रहा तो वे जवानी में बूढ़ियाँ बन जायेंगी!" विदूषकी ने सहानुभूति प्रकट करते जवाब दिया।

ये बातें सुनते ही राजकुमार बाहर आये और बोले—"बताओ, तुम कौन हो?"

विदूषकी ने राजा के युद्ध में जाने के समाचार से लेकर तब तक की सारी कहानी सुनायी।

"क्या राजकुमारियाँ बड़ी सुंदर हैं?" बड़े राजकुमार ने पूछा।

"सुन्दरता की बात क्या कहूँ, सरकार! आप देखेंगे तो बेहोश हो जायेंगे?" विदूषकी ने गंभीर होकर कहा।

"उनको हमें एक बार दिखा सकती हो?" बड़े राजकुमार ने फिर पूछा।

"मैं दिखा सकती हूँ, जरूर! लेकिन आप लोग उनकी निगरानी से बचाकर देख लीजिये!" विदूषकी ने शर्त लगायी। राजकुमारों ने उसकी बात मान ली।

विदूषकी राजकुमारियों के पास लौट आयी और बोली–"बाहर उद्यान में कैसा आनंद आता है! क्या बताऊँ? चलिये, ज़रा घूम आयेंगी!" यह कहकर विदूषकी राजकुमारियों को अपने साथ ले आयी। उद्यान के पत्थर के फलक के पास लाकर उस पर पैर रखा और बोली–"अरे, यह हिलता है।" फिर उसे उठाकर–"ओह, इसके नीचे सीढ़ियाँ हैं!" इसके बाद सीढ़ियों से उतरते राजकुमारियों को अपने साथ लायी, वहाँ ठहरकर बोली–"अरे, यहाँ पर तो कोई राजमहल है।" वे चारों राजमहल में पहुँचीं। भीतर ऐसा मालूम पड़ा कि वहाँ कोई नहीं रहता है। राजकुमार आड़ में से राजकुमारियों को देख बहुत खुश हुए। इसके बाद उन्होंने सामने आकर कहा–"हम तीनों राजकुमार हैं। हमारे साथ शादी कीजिये।"

"तुम लोग शादी कर सकती हों! राजकुमार देखने में सुंदर हैं। तुम तीनों इन तीनों के साथ शादी करो तो मैं रसोइये के साथ शादी करूँगी। लेकिन यह सब हमारे मालिक राजा के युद्ध से लौटने के बाद ही होगा।" विदूषकी ने कहा।

राजा युद्ध में बिजयी होकर लौटा था। इसलिए बहुत प्रसन्न था। राजा ने अपनी पुत्रियों की शादी के लिए मान ली। तीनों राजकुमारों के साथ राजकुमारियों का विवाह वैभव के साथ संपन्न हुआ। उसी समय विदूषकी ने रसोइये से शादी की। सब आनंद से रहने लगे!

तीन सन्यासी

बहुत समय पहले की बात है। एक देश में एक धर्मात्मा राजा था। एक दिन उस राजा के पास एक सन्यासी अपने दो शिष्यों के साथ आ पहुँचा। राजा ने उस सन्यासी का आदर-सत्कार किया, उसे उचित आसन पर बिठाकर पूछा—"महात्मन्! आप किस काम पर पधारे हैं। आज्ञा दीजिये।"

सन्यासी आसन पर हिरण का चमड़ा बिछाकर बैठ गया और बोला—"महाराज! मैं अपने शिष्यों के साथ तपस्या करने हिमालयों में जा रहा हूँ। आज की भिक्षा आप से ग्रहण करने आया हूँ।"

"आपके ये ही दो शिष्य हैं क्या?" राजा ने पूछा।

"मेरे शिष्य बनने के लिए वैसे बहुत आये, लेकिन वे मेरे शिष्य बनने योग्य न थे। इसलिए इन दोनों को ही मैंने अपने साथ रखा।" सन्यासी ने जवाब दिया।

इतने में राजा के दरबार में एक और सन्यासी आया। उसके साथ आठ शिष्य थे। राजा ने उसका भी स्वागत किया, उचित आसन पर बिठाकर यही प्रश्न पूछा।

"हम विश्व के कल्याण के हेतु देशों का पर्यटन करते हैं। आपको हमारा अनुग्रह देने के लिए यहाँ पर आये हैं।" दूसरे सन्यासी ने कहा।

इतने में तीसरा सन्यासी दर्प के साथ पालकी में आकर उतरा। उसके साथ बारह शिष्य थे। उसने दरबार में प्रवेश करते ही राजा को आशीर्वाद देते हुए कहा—"विजयीभव! तुमको दान-धर्म के प्रवीण होने का यश सदा के लिए प्राप्त हो।"

राजा ने तीसरे सन्यासी का भी स्वागत कर एक आसन दिखाया। उसके शिष्यों ने अपने गुरु की प्रशंसा करते बताया कि वे

शंभुनाथ मिश्र

सन्यासियों के चक्रवर्ती हैं। उनको प्रसन्न करने से राज्य का कल्याण होगा।

थोड़ी देर बाद राजा तीनों सन्यासियों और उनके शिष्यों को भोजनालय में ले गया। सबको थालियों में बढ़िया भोजन परोसा गया।

पहले सन्यासी ने आँखें बंद कर अपनी थाली में से तीन ही कवल लेकर खाया और उठकर हाथ धो लिया। उसके दो शिष्यों ने भी ऐसा ही किया।

"यह क्या किया, आप लोगों ने? क्या भोजन पदार्थ स्वादिष्ठ नहीं हैं?" राजा ने प्रथम सन्यासी से पूछा।

"स्वाद की बात भगवान जाने। पेट भर गया। तृप्ति मिली।" प्रथम सन्यासी ने कहा।

दूसरे सन्यासी और उसके शिष्यों ने सभी पदार्थ पूरे खा डाले और माँग कर खाना उचित न समझ कर उठ खड़े हुए।

तीसरे सन्यासी और उसके सिष्यों ने सारे पदार्थ समाप्त कर रसोइयों को और परोसने का इशारा किया। रसोइयों ने इशारा किया कि सब पदार्थ समाप्त हो गये हैं। "राजा के घर में भी खाने की कमी है।" मन में गुनगुनाते तीसरा सन्यासी उठ खड़ा हुआ।

भोजन के समाप्त होने पर राजा ने तोनों सन्यासियों के आगे तीन थालियाँ रखकर कहा—"स्वीकार कीजिये।" प्रत्येक थाली में हज़ार मुद्राएँ थीं।

प्रथम सन्यासी ने अपने आगे की थाली की ओर एक बार देखा और अपने शिष्यों को इशारा किया। वे उस थाली को लेकर बाहर चले गये।

दूसरे सन्यासी ने थाली की मुद्राओं को बड़ी सावधानी से गिनकर देखा और उनको अपने शिष्यों में मनमाने बाँट दिया—किसी को ज्यादा और किसी को कम।

तीसरे सन्यासी ने मुद्राओं पर हाथ न लगाया, पर राजा की ओर क्रोध भरी दृष्टि से देखा।

राजा ने सन्यासियों से पूछा—"बताइये, आप लोगों की और इच्छाएँ हों तो!"

"मुझे और मेरे दो शिष्यों को गेरुवे रंग के तीन टुकड़े दिला देंगे तो पहन लेंगे। हमने भले ही और बातों पर विजय पायी हो, लेकिन देहाभिमान पर विजय न पायी।" प्रथम सन्यासी ने कहा।

"महाराज, नये वस्त्रों की एक गठरी दिला दे तो हम अपना बंटवारा कर लेंगे।" दूसरे सन्यासी ने कहा।

तीसरे सन्यासी ने कहा—"राजन्! मैं आपकी बनावटी विनय को देख धोखा खानेवाला नहीं हूँ। लो, शाप देता हूँ?" हुँकार कर उठा।

राजा ने आश्चर्य से पूछा—"किस लिये? मुझसे ग़लती क्या हुई?"

"ग़लती एक ही क्या? तुम अंतर क्या जानो। मंदाग्नि से परेशान बीमार व्यक्ति को और मुझे बराबर खाना खिलाते हो! उन दोनों से भी बदतर आसन मुझे दिया। दो शिष्योंवाले के बराबर मुझे भेंट दी। जो हुआ, सो हो गया। मुझे और मेरे बारह शिष्यों को प्रत्येक को एक हज़ार मुद्राएँ और नये कपड़े दोगे तो तुमको क्षमा करके आशीर्वाद दे चला जाऊँगा। नहीं तो मेरा शाप तुम्हारे सर्वस्व को भस्म कर देगा।" तीसरे सन्यासी ने कहा।

राजा ने दूसरे सन्यासी की ओर मुड़कर पूछा—"महात्मन्! आप किस आसन पर बैठे हैं?"

"चांदी के आसन पर!" दूसरे सन्यासी ने कहा।

राजा ने प्रथम सन्यासी से भी यही पूछा। "मैं नहीं जानता कि मेरा आसन कैसा

है? मैं अपने हिरण के चर्म पर बैठा हूँ। यही जानता हूँ।" प्रथम सन्यासी ने कहा।

"देखा? ऐसे मूर्ख व्यक्ति को सोने का आसन दिया जिसे यह मालूम नहीं कि वह किस प्रकार के आसन पर बैठा है। और मुझे पीतल के आसन पर बिठाया।" तीसरे सन्यासी ने क्रोध से कहा।

राजा ने मुस्कुराते कहा–"ऐसी बात नहीं, प्रथम जो आये, उनको सोने का आसन दिया, बाद को आनेवाले को चाँदी का आसन दिया, आख़िर जो आये, उनको पीतल का। मैंने जान-बूझकर ऐसा नहीं किया, लेकिन मैं समझता हूँ कि ये आसन आप लोगों की योग्यताओं के अनुसार मिले हैं। प्रथम सन्यासी सच्चे सन्यासी हैं। इंद्रियों पर नियंत्रण रखते हैं। दूसरे तो साधना कर रहे हैं, पर अभी तक सफल न हुए हैं। तुम कपट सन्यासी हो! पेट भरने के लिए यह वेष बना रखा है। कल से तुम या तुम्हारे कोई शिष्य मेरे राज्य में दिखायी देगा तो मैं जेलखाने में डलवा दूँगा। तुम जैसे लोगों के शापों की मैं परवाह नहीं करता।"

तीसरे सन्यासी और उसके शिष्य लज्जा से सर झुकाकर वहाँ से चले गये।

इस बीच प्रथम सन्यासी के शिष्य राजा की दी हुई हज़ार मुद्राओं को गरीबों में बाँटकर खाली थाली लिये वापस लौटे।

यह सब देखकर दूसरे सन्यासी ने अपने शिष्यों से कहा–"मैं तुम्हारे गुरु बनने योग्य नहीं हूँ। अपने-अपने रास्ते चले जाओ। मैं इनका शिष्य बन जाता हूँ।" यह कहकर उसने प्रथम सन्यासी के चरणों पर गिरकर प्रार्थना की–"मुझे अपने शिष्य के रूप में स्वीकार कीजिये। राजा ने मेरी आँखें खोल दी हैं।"

प्रथम सन्यासी ने उसकी प्रार्थना सुन ली। राजा को आशीर्वाद देकर अपने तीनों शिष्यों को साथ ले वहाँ से चले गये।

गुड़िया बेटियाँ

बहुत समय पहले की बात है। एक यवन नगर में एक चमार था। घर के नाम पर उसका एक ही कमरा था। उसके एक खिड़की और एक दरवाज़ा था। उसमें वह अकेला रहता था। वह बड़े सवेरे घर से निकलता, दिन-भर अपना काम देख लेता, शाम को घर लौटता और खाना खाकर सो जाता। यही उसका दैनिक कार्य था।

बुढ़ापे तक वह जूते सीते इसी तरह ज़िंदगी बसर करता था। एक दिन उसने अपने मन में सोचा–"मेरी ज़िंदगी भी क्या है? अकेलापन खटकता है। अगर बच्चे होते मुझे कितनी खुशी मिलती?" लेकिन उसकी पत्नी ही न थी तो बच्चे कहाँ से आते?

बच्चों की कमी को दूर करने के लिए उसने एक उपाय किया। आटे से तीन बड़ी लड़कियों के खिलौने तैयार किये। तीनों में फ़रक दिखाने के लिए एक खिलौने में सफ़ेद पोशाक, दूसरे में नीली और तीसरे में लाल पोशाक पहना दी।

दूसरे दिन जब वह अपने काम पर जाने लगा तो उसने खिड़की के पास एक कुरसी डालकर उस पर सफ़ेद पोशाकवाली गुड़िया को बिठाकर बोला–"बेटी, मैं फिर शाम को ही लौटूंगा। तब तक तुम समुद्र और उस पर जानेवाली नावों को देखते बैठी रहो। हम इज़्ज़तवाले हैं। इसलिए घर के आगे जानेवाले लोगों को आँख उठाकर भूल से भी कभी न देखो। अगर वे कुछ पूछे भी तो जवाब न देना, समझे!" ऐसा सावधान कर उसने दरवाज़े पर ताला लगाया और चला गया।

रास्ते से जानेवाले हर कोई गुड़िया को देखता और यह सोचते चला जाता–"वह लड़की कितनी सुन्दर है। वह कितनी

कुमारी कृष्णा झा

किरीट रखूँगा और सारे शरीर में हीरे के गहने पहनवा दूँगा। मुझसे बोलना नहीं चाहती हो? तो कम से कम एक बार मेरी ओर आँख उठाकर देखो तो सही!" राजकुमार ने कहा।

तब भी गुड़िया न हिली।

"मैं तुमको छोड़नेवाला नहीं हूँ। कल फिर आऊँगा। तब तक मेरा यह इनाम ले लो।" यह कहते राजकुमार ने एक सोने की अंगूठी उस लड़की की गोद में फेंक दी और आगे बढ़ गया।

शाम हो गयी। चमार घर लौटा। गुड़िया को देख बोला–"बेटी, तुम दिन-भर अकेली रही हो। अब हम दोनों बात करते खुशी से खाना खा लेंगे।" यह कहकर चमार ने गुड़िया को कुरसी पर से ऊपर उठाया। गुड़िया की गोद से एक सोने की अंगूठी नीचे गिर पड़ी।

चमार ने गुस्से में आकर गुड़िया को नीचे फेंक दिया और कहा–"तुम दुष्ट हो! मेरे यहाँ से जाते ही तुम रास्ते चलनेवालों से इनाम और भेंट लेती हो? तुम मेरी लड़की बनी रहने योग्य नहीं हो।" यह कहते उसने गुड़िया को तोड़कर टुकड़े-टुकड़े करके फेंक दिया।

घमंड़ी है। लोगों की ओर आँख उठाकर नहीं देखती।"

थोड़ी देर में उधर से राजकुमार टहलने आया। गुड़िया को देखते ही वह रुक गया और खिड़की के पास जाकर बोला–"हे सुन्दरी, तुम्हारे सौंदर्य के बारे में क्या कहूँ। एक बार मेरी ओर देखकर हँस दो। मुझसे बोलोगी नहीं?"

गुड़िया न हिली और न उसने कोई जवाब दिया।

"क्या बोलने से तुम्हारे मुँह से हीरे झरते हैं? मुझसे शादी करोगी? अगर मुझसे शादी करोगी तो मैं तुम्हारे सर पर

दूसरे दिन सवेरे चमार ने अपने काम पर बाहर जाते नीली पोशाकवाली गुड़िये को खिड़की के पास बिठाया और कहा— "बेटी, मेरे लौटने तक तुम समुद्र में आने-जानेवाली नावों को देखती रहो, लेकिन तुम्हारी दीदी की तरह रास्ते चलनेवालों से बात न करो।" यह कहकर ताला लगाकर वह चला गया।

उस दिन भी राजकुमार उधर से निकला और बोला—"हे सुन्दरी! सफ़ेद पोशाकों से भी नीली पोशाक तुमको और सुन्दर लगती है। आज मुझ पर दया करके बोलो तो! मुझे देखो तो?"

गुड़िया बोली नहीं।

"मैं राजकुमार होकर भी तुम से प्रार्थना करता हूँ। एक बार कह दो कि तुम मुझसे शादी करोगी।" राजकुमार ने गुड़िया से गिड़गिड़ाया।

पर कोई फ़ायदा न रहा।

"अच्छा, कल फिर आऊँगा। तब तक तुम्हारा दिल न बदलेगा? मेरी यादगार के रूप में यह रख लो।" यह कहते राजकुमार ने गुड़िये की गोद में एक मानिक जड़ी अंगूठी फेंक दी और अपने रास्ते चला गया।

चमार घर लौटते ही गुड़िये की गोद में और अच्छी अंगूठी देख गरज उठा—

"छी, छी, तुम कुलटा हो। तुम्हारी दीदी ही अच्छी थी। ऐसी बेशर्म लड़की मुझे नहीं चाहिये।" यह कहते उसने उस गुड़िये को तोड़ दिया।

तीसरे दिन सवेरे चमार ने लाल पोशाकवाली गुड़िये को खिड़की पर रखा और उसे भी सावधान कर चला गया।

उस दिन भी राजकुमार आया। गुड़िये की लाल पोशाकों की बड़ी तारीफ़ की और प्रार्थना की कि वह उसकी ओर देखकर मुस्कुरावे, उससे शादी भी करे, पर इस बार भी कोई फ़ायदा न रहा।

"तुम सुन्दर जरूर हो, लेकिन तुम्हारा दिल पत्थर का है। मैं उसे गला देता हूँ। जब तक तुम मुझसे शादी करने को न मानोगी तब तक मैं रोज आऊँगा। लो, यह भी रख लो।" यह कहकर एक हीरे की अंगूठी राजकुमार ने गुड़िये की गोद में फेंक दी और आँसू पोंछते वहाँ से चला गया।

उस दिन शाम को चमार ने घर लौट कर देखा, गुड़िये की गोद में हीरे की अंगूठी देख कहा—"तुम जैसी लड़कियों से अप्रतिष्ठा पाने के बदले संतान का न होना ही अच्छा मालूम होता है।" यह कहते उसने तीसरी गुड़िये को भी तोड़ डाला।

चौथे दिन बाहर जाते वक़्त चमार ने खिड़की के किवाड़ बंद किये, दर्वाज़े पर ताला लगाकर अपने काम पर चला गया।

राजकुमार चौथे दिन भी उधर से निकला, खिड़की को बंद देख वह हताश हो गया। इसके बाद तीन-चार दिन लगातार आया, पर उस युवती को न देख सोचा कि अब उसको देखना भी नामुमक़िन है। उसने घर लौटकर चारपाई पकड़ ली।

राजकुमार को बीमार देख राजा ने वैद्य को बुला भेजा। राज वैद्य ने राजकुमार की जाँच करके कहा—"महाराज! यह

मानसिक बीमारी है। इसके कोई दवा नहीं है। इसके कारण का पता लगाकर इसे दूर कीजिये।"

राजा के पूछने पर राजकुमार ने कहा—"पिताजी! मैं चमार की लड़की सुंदरी से प्यार करता हूँ। उससे शादी न करूँगा तो मैं जी नहीं सकता।"

"बस, यही बात! कल इस वक़्त तक मैं उस लड़की से तुम्हारा विवाह करूँगा। ठीक है न? चिंता न करो।" राजा ने कहा।

राजा ने चमार को बुला भेजा और आज्ञा दी—"तुम अपनी लड़की को तुरंत राजभवन में ले आओ।"

"महाराज! यह असंभव है!" चमार ने काँपते हुए जवाब दिया।

"असंभव है? क्यों?" राजा ने पूछा। चमार ने संकोच करते सब बातें कहीं।

राजा ने इस पर यक़ीन नहीं किया और आदेश दिया—"शाम के अन्दर तुम अपनी लड़की ले न आओगे तो तुम्हारा सर उड़ा दिया जायगा। जाओ!"

चमार का दिमाग़ चकराने लगा। उसे कुछ सूझता न था, वह जँगल की ओर चलते चलते जा रहा था।

जंगल में एक बूढ़ी लकड़ी बीन रही थी, उसने चमार से पूछा—"कहाँ जा रहे हो, बेटा!"

"मेरी फ़िक्र न करो! मैं पहाड़ पर से कूद कर मरने जा रहा हूँ।" चमार ने कहा।

"छी, ऐसा न करो! आखिर तुम्हें किस बात की तक़लीफ़ है?" बूढ़ी ने फिर पूछा।

चमार ने अपनी सारी कहानी बूढ़ी को सुनायी। "तब तो एक काम करो। मैं तुमको एक लकड़ी देता हूँ। उसे लेकर समुद्र के पानी पर थप-थपाते कहो—'वरुण

देव, अपनी बेटी को भेजो! मैं राजकुमार के साथ उसकी शादी करा दूंगा!" तब तुम्हारा काम बन जायगा।" बूढ़ी ने सांत्वना दी।

"मेरे साथ मज़ाक न करो! मैं ही एक मिला, तुमको।" चमार ने खीझते हुए कहा।

"नहीं बेटा, इसे मजाक़ न समझो! मैं जैसा कहता हूँ, करो! इस में तुम्हारा नुक़सान थोड़े ही होता है?" यह कहकर बूढ़ी ने अपने हाथ की एक लकड़ी तोड़कर उसके हाथ में दी।

चमार उस लकड़ी को ले जाकर समुद्र में घुटने तक के पानी में खड़ा हो गया और पानी पर लकड़ी से थपथपाते कहा–"वरुण देव, अपनी बेटी को भेजो! राजकुमार के साथ उस की शादी करा दूंगा।"

उसकी बातें पूरी न हो पायी थीं कि एक ऊँची लहर तट तक आयी और टूट गयी। जहाँ वह लहर टूटी, वहाँ पर एक सोने की गुड़िया जैसी युवती, इंद्र धनुषी रंगों जैसे चमकीले वस्त्र धारणकर खड़ी हुई है।

चमार की जान में जान आ गयी। "आओ, बेटी!" यह कहते उसका हाथ पकड़कर उसे राजभवन में ले गया। राजा उसे देख चकित रहा, सोचा कि इस लकड़ी के पीछे राजकुमार बीमार पड़ गया तो कोई आश्चर्य की बात नहीं!

राजकुमार ने उसे देखकर कहा–"ओहो, सुन्दरी, मैं ने तुम्हारा सौंदर्य अब तक पूरा देखा ही कहाँ?"

वरुण देव की पुत्री की राजकुमार के साथ शादी हो गयी। राजा के समधी को जूते सीते जीना अच्छा न होगा, यह सोच कर राजा ने उसे राजभवन में पादत्राण विभाग का मंत्री बनाया।

निकम्मा

एक गाँव में एक गुरु था। उनके पास बहुत विद्यार्थी पढ़ते थे। उन विद्यार्थियों में बनवारीलाल एक था। वह अव्वल दर्जे का मूर्ख था।

एक दिन गुरुजी ने बनवारीलाल को बुलाकर कहा–"अरे निकम्मे! तुम गाँव के मुखिये के घर याने पेड़वालों के यहाँ जाकर, चार नारियल जल्द ले आओ।" उसके हाथ एक बोरा देकर भेजा।

बनवारीलाल मुखिया के घर गया। वहाँ पर नारियल का पेड़ था। लेकिन उसे यह नहीं मालूम था कि पेड़वाले क्या होते हैं? इसलिए वह उस पेड़ के सामने खड़े होकर बोला–"गुरुजी ने चार नारियल लाने को कहा है।"

पेड़ ने कोई जवाब नहीं दिया। इसलिए पेड़ पर चढ़कर उसने चार नारियल तोड़े और उनको गुरुजी के हाथ दिया।

थोड़ी देर बाद गुरुजी के पास मुखिया आया और क्रोध में बोला–"आप नारियल चाहते हैं तो माँगकर ले जाते!"

"अरे, मैंने सोचा था, निकम्मा बनवारी ने आपसे कहा होगा। मैं उसे डांटूँगा!" मुखिये को समझाकर गुरुजी ने भेज दिया, फिर बनवारी को बुलाकर पूछा–"तुम किस से पूछकर नारियल लाये हो?"

"पेड़ से पूछकर ही लाया हूँ, जी!" बनवारी ने जवाब दिया।

"तुझे बिलकुल अक़्ल नहीं, इसलिए कहावत चल पड़ी है न–'काला अक्षर भैंस बराबर' तुम भैंस चराने के लायक़ हो, पढ़ाई के नहीं, इसलिए कल से भैंस चराने चले जाओ।" गुरुजी ने कहा।

दूसरे दिन से निकम्मा बनवारीलाल गुरुजी की गाय-भैंस चराने लगा। गुरुजी ने जो बातें कही थीं, वे उसकी समझ में

अविनाश कुमार

न आयीं। उसने यह अर्थ लगाया—न हिलनेवाले बैल को हिलाने से पढ़ाई हासिल होती है।

गुरुजी उस गाँव के शिवमंदिर के पुजारी भी थे। बनवारीलाल एक बार शिव-मंदिर में गया, तो उसे सामने एक नन्दी दिखायी पड़ा। वह न हिलनेवाला बैल है, उसे हिला देने से उसे शिक्षा मिलेगी, यह सोचकर उसने नंदी को ज़ोर से ढकेला। नंदी एक तरफ़ झुककर गिर गया। उसके नीचे एक गड्ढा था। उसमें धन और आभूषण थे। मंदिर में आये हुए सब लोगों ने यह देखा।

मंदिर की जो आमदनी होती, व लोग जो भेंट चढ़ाते, उसमें से गुरुजी जो कुछ बचाता, उसे वहाँ पर छिपा देता था। वह रहस्य अब प्रकट हो गया। गुरुजी ने गाँव के बुजुर्गों के सामने कान पकड़कर माफ़ी माँग ली कि वह आगे कभी ऐसा धन न छिपायगा। गुरुजी ने घर पहुँचते ही बनवारीलाल से कहा—"तुझे पढ़ाना मेरी बेवकूफ़ी है। यहाँ से चले जाओ!"

बनवारी की आँखों में आँसू आये। उसने दीनता से पूछा—"आपने जो कुछ पढ़ाया, मैं उसे हजम न कर पाया। मुझे केवल दो उपदेश के वाक्य बताइये। मैं यहाँ से चला जाऊँगा!"

"अबे, कौए की नाक में कुंदरू के समान तुझे उपदेश देना भी बेकार है।" गुरुजी ने कहा।

"तब मेरी हालत क्या होगी?" बनवारी ने पूछा।

"कौन कह सकता है? जो होना है, सो होकर ही रहेगा है, जो आनेवाला है, वह आकर ही रहेगा।" गुरुजी ने कहा।

बनवारीलाल अपनी छोटी-सी गठरी सर पर रखे, गुरुजी की ये बातें रटते—कौए की नाक में कुंदरू से क्या फ़ायदा?

जो होना है, सो होकर ही रहेगा, जो आनेवाला है, वह आकर ही रहेगा।' अपने गाँव की ओर चल पड़ा।

रास्ते में बनवारीलाल ने देखा, एक कौआ आकर एक पेड़ पर आ बैठा। उसकी नाक में कोई लाल चीज़ चमक रही थी। उसने सोचा कि गुरुजी ने कहा था–'कौए की नाक में कुंदरू शोभा नहीं देता।' इसलिए जब कौआ उस लाल चीज़ को नाक से नोच रहा था तब उसने हांक दिया। कौआ उड़ गया और वह चीज़ नीचे गिर पड़ी। बनवारीलाल ने उसे उठाकर देखा–वह मानक जड़ी अंगूठी थी। गुरुजी की बात का पालन करने से उसे अच्छी अंगूठी मिल गयी, यह सोचकर खुश होते हुए उसे अपनी उंगली में पहन ली और आगे बढ़ा।

वह अंगूठी राजकुमारी की प्राण-प्रिय थी। जब से वह खो गयी, राजा के सेवक उसे ढूंढ़ रहे थे। बनवारीलाल के हाथ में उस अंगूठी को देख राजभट उसे राजा के पास ले गये। गुरुजी ने बताया भी है–"जो होना है, सो होकर ही रहेगा। जो आना है, वह आकर ही रहेगा।" इसलिए उसे होने और आनेवाली चीज़ का पता लगाने की इच्छा पैदा हुई।

राजा ने बनवारीलाल से पूछा–"तुमको यह अंगूठी कहाँ मिली?"

"एक कौए ने दी है।" बनवारीलाल ने कहा। राजदरबार में बैठे सभी लोग ठठाकर हँस पड़े। राजा ने भांप लिया कि बनवारीलाल भोला है। राजा ने उसके बारे में सारी बातों का पता लगाया, और सोचा कि ऐसा व्यक्ति स्वावलंबी जीवन बिता नहीं सकता। इसलिए उसकी ज़िंदगी को आराम से काटने का ज़रूरी इंतज़ाम किया।

आदमी की आयु

दादा के आते देख बच्चे तरह-तरह की बातें करते खिल-खिलाकर हँस पड़े ।

"बन्दर है! सौ पैसे बन्दर है!"

"बन्दर की तरह पोपला मुंह बार-बार चलाता है!"

"पलकें गिरती क्यों हैं?"

"नाराज़ होने से गुर गुर करता है!"

"अबे, किस का मजाक़ उड़ाते हो?" दादा ने पूछा। हाथ की लाठी एक कोने में रखकर आराम कुर्सी पर बैठते हुए।

"हमारी गली के कोने में रहते हैं न, वे साहब आपकी खोज में आये थे, दादाजी! बड़ी देर तक बैठे रहें, अभी अभी चले गये। शायद रास्ते में आप से मिले भी हों।" बच्चों ने कहा।

दादा ने सुंघनी निकालकर हाथ में डालते हुये पूछा—"क्या तुम में से कोई बता सकते हो, उस बूढे की कितनी उम्र होगी?"

"सत्तर... नब्बे...एक सौ बीस..." सबने अपने अपने ढंग से बताया ।

"इसीलिए तुम लोगों को बंदर की तरह दिखायी देता है।" दादा ने कहा ।

"यह क्या कहते हैं, दादा जी!" बच्चे उनकी बात समझ न पाये और एक साथ बोल उठे।

"तुम लोगों को कहानी बतायी है न?" दादा ने कहा ।

"नहीं, दादाजी!... कहिये न! वह कैसी कहानी है! दादाजी!" बच्चों ने दादा को घेर लिया ।

"आदमी की आयु की कहानी रे! शायद मैंने नहीं सुनायी। अब सुनाता हूँ, सुनो!" यह कहते दादाजी ने सुंघनी चढ़ायी, कहानी शुरू की ।

नरेश सहगल

ब्रह्मा ने सृष्टि समाप्त कर मनुष्य को सारी प्रकृति को दिखाते हुए कहा–"इस प्रकृति पर तुम्हारा ही पूरा अधिकार रहेगा!"

ब्रह्मा की सृष्टि के पहाड, जंगल, नदी-समुद्र सबको देख मनुष्य बहुत खुश हुआ और पूछा–"तब तो नानाजी! मैं कितने समय तक इस प्रकृति पर शासन करूँगा?"

"बेटा! तुमको तीस साल की आयु निश्चित की है!" ब्रह्मा ने कहा।

"बस, इतनी ही! नानाजी, मेरी आयु और बढ़ा दीजिये न!" मनुष्य ने ब्रह्मा से प्रार्थना की।

"यह मेरे हाथ की बात नहीं है, बेटा! देखूंगा, अगर मेरी सृष्टि के अन्य जानवर अपनी आयु में से तुमको हिस्सा देते हैं कि नहीं। अगर वे जानवर हिस्सा दे तो इस तरह तुम्हारी आयु बढ़ सकती है।" ब्रह्मा ने कहा।

ब्रह्मा ने इसके बाद गधे को बुलाकर कहा–"अरे गधे, सुनो! मैंने तुमको बोझ ढोने, गालियाँ खाने और घास चरने के लिए पैदा किया है।"

"मुझे इस तरह कितने साल जीना है! नानाजी!" गधे ने पूछा।

"तुम्हारी आयु चालीस साल की है।" ब्रह्मा ने कहा।

"इतनी आयु मुझे नहीं चाहिए। इसमें से आधी आयु काफ़ी है! नानाजी!" गधे ने कहा। गधे की आयु में से बीस साल मनुष्य को मिले।

इसके बाद ब्रह्मा ने कुत्ते को बुलाकर कहा–"मैंने तुम्हारी सृष्टि मानव का पहरा देने, उसकी सेवा करने और वह जो कुछ देता है, उसे खाने के लिए की है। मैंने तुम्हारी आयु चालीस साल की दी है।"

"ऐसी जिंदगी के लिए मुझे आधी उम्र काफ़ी है, प्रभु।" कुत्ते ने जवाब दिया।

इससे आदमी की आयु और बीस साल बढ़ गयी।

इसके बाद ब्रह्मा ने बंदर को बुलाकर कहा–"अबे बन्दर! तुमको देख सब लोगों के हँसने के लिए तुम्हारी सृष्टि की है। तुम्हारी दृष्टि, चाल, करतूतें बड़ी अजीब होती हैं। तुम पेड़-पौधों के आश्रय में रहकर ज़िंदगी बिताओगे!"

"मैं कितने साल ऐसे काटूंगा, महाराज!" बंदर ने पूछा।

"साठ साल!" ब्रह्मा ने जवाब दिया।

"मुझे ऐसी लंबी उम्र नहीं चाहिए, महराज! उसमें आधी दे दीजिये!" बंदर ने जवाब दिया। इससे आदमी की आयु सौ साल की हो गयी।

"देखा है रे, आदमी भले ही सौ साल जीवे। उसकी असली ज़िंदगी पहले दी हुई तीस साल की है। उसके बाद वह पत्नी और बच्चों के लिए नौकरी-चाकरी करके आदमी गधे की तरह जीता है। पचास से सत्तर साल तक पोतों-नातों के भले-बुरे का ख्याल रखते, वे जो भी फेंक देते हैं, उसे खाते, कुत्ते की ज़िंदगी जीता है। सत्तर साल के बाद देखा होगा, दांत गिर जाते हैं, दृष्टि मंद हो जाती है, पैर लड़खड़ाने लगते हैं, तब वह बंदर की तरह दिन काटता है। तुमने उस बूढ़े को बंदर बताया, इसमें कोई अचरज की बात नहीं है। बंदर को देख जैसे खुश हो जाते हो, वैसे उनको देख खुश होते हो।" यह कहकर दादा ने कहानी खतम की।

"तब तो दादाजी, अब आप की ज़िंदगी कैसी ज़िंदगी है?" एक नटखट लड़के ने पूछा।

"अबे गधे! जब देखो, तुम लोगों को कथा-कहानी को छोड़ पढ़ाई-की चिंता नहीं है। चलो, जाकर पढ़ लो!" यह कहकर दादा ने बच्चों को भगा दिया।

ख्वामख्वाह

एक समय था, जब यमन देश में अनाथ यहूदी बालकों को वहाँ के अधिकारी इस्लाम मजहब में जबर्दस्ती शामिल कर लेते थे। लेकिन कुछ यहूदी लोग अपनी जाति के अनाथ बालकों को साना नगर में भेजकर एक अध्यापक के पास पढ़ाई का इंतज़ाम करते थे। यह खबर साना नगर के मुसलमान अधिकारियों को लग गयी।

एक मुसलमान छोटा अफ़सर एक दिन यहूदी बस्ती की जाँच करते यहूदी बालकों की पाठशाला में पहुँचा और वहाँ के अध्यापक से पूछा–"ये सब अनाथ बालक हैं न?"

"असल में ये सब गधे हैं। मैंने पढ़ा-लिखाकर इनको आदमी बनाया।" अध्यापक ने कहा। बच्चे अध्यापक की बात का समर्थन करने के ख़्याल से गधों की तरह चिल्लाने लगे।

अफ़सर को अध्यापक की बातों पर यक़ीन हो गया।

"मेरे पास एक काना गधा है। उसे तुम्हारे पास पढ़ने को छोड़ देता हूँ। उसको आदमी बनने में कितना समय लगेगा?" अफ़सर ने पूछा।

"तीन साल लग सकते हैं।" अध्यापक ने जवाब दिया।

"बस, तीन ही साल! कोई बात नहीं। मैं तब तक इंतज़ार कर सकता हूँ। बात यह है कि मेरी औरत बच्चों के लिए तरसती है। मेरे गधे को आदमी बना दोगे तो बेटे की तरह पालेंगे।" उस अफ़सर ने ख़ुशी में आकर कहा।

अफ़सर ने दूसरे दिन अपने काने गधे को लाकर अध्यापक को सौंप दिया। अध्यापक ने उससे कहा–"मगर एक बात याद रखो। यह बात तुम किसी से न

जयंतकुमार भट्टाचार्य

कहो। तुम अपने बेटे को देखने के लिए भूल से भी यहाँ नहीं पटखना, समझे! लेकिन तुम तीन साल बाद आकर उसे ले जाओ।"

अफ़सर खुश होता हुआ चला गया। वह तीन साल तक उस ओर आया नहीं। तीन साल के पूरे होते ही अध्यापक के पास दौड़ा-दौड़ा आया और पूछा—"कहाँ है, मेरा बेटा! दिखाओ तो?"

"तुम्हारे गधे की अक़ल की बात मैं क्या कहूँ? उसकी पढ़ाई कभी की पूरी हो गयी। वह इस वक़्त दिमार में न्यायाधिकारी बना हुआ है।" अद्यापक ने जवाब दिया। अध्यापक जानता था कि दिमार का न्यायाधिकारी काना है। उसके एक ही आँख है।

अफ़सर को बड़ी खुशी हुई। वह तुरंत दिमार पहुँचा। अदालत में फ़ैसला करनेवाले काने न्यायाधिकारी को देख पूछा—"मेरे बेटे! क्या मुझे नहीं पहचानते? तुम मेरे काने गधे हो न?"

न्यायाधिकारी ने उस अफ़सर को पागल समझा और उसे पागल खाने में भिजवा दिया।

* * *

एक बस्ती में शफीका नामक एक औरत थी। उसका मर्द हंगल बावला था। शफीका बड़ी अक्लमंद थी। इज्जतवाली थी। वह गृहस्थी के सारे मामलों को अपनी होशियारी से खुद सुलझा लेती और ऐसा व्यवहार करती कि दुनिया उसके पति को नालायक़ न समझे। वह खुद अपने में यह सोचकर दुखी होती कि उसे योग्य पति प्राप्त नहीं हुआ है, उसकी बदनसीबी है।

एक दिन शफीका को देखने रहमा नामक पड़ोसिन आयी। बातों के सिलसिले में रहमा ने मर्दों की सूझ-बूझ, अक्लमंदी, और

योग्य बताते बोली कि ऐसे पुरुषों के जरिये गृहस्थी की कैसी उन्नति होती है ।

सारी बातें सुनकर शफीका ने अपने दिल की सारी बातें उसके सामने खोलकर रख दीं–"मेरे पति से एक काम भी करते नहीं बनता, वे मेरे सिर पर शाप बनकर सवार हैं। एक धेली कमाना नहीं जानते। समझो, इस गृहस्थी को अकेली संभालते मेरी जान जा रही है। वे कैसे बेवकूफ़ हैं, तुमको खुद देखने से पता चलेगा, मेरे कहने से समझ न सकोगी।" यह कहकर अपने पति को पुकारते बोली–"हंगल, आले में रोटी है, ले आओ, तुमको खाना खिलाऊँगी।"

हंगल चला गया। थोड़ी देर बाद चिल्ला उठा–"शफीका! मैं सीढ़ियों पर हूँ। बताओ तो, मुझे नीचे उतरना है, या ऊपर चढ़ना है?"

हाथ में रोटी हो तो उतर आओ, नहीं तो ऊपर चढ़कर रोटी ले आओ।" शफीका ने कहा।

हंगल ने अपने हाथों में देखा। रोटी नहीं थी। ऊपर चढ़कर रोटी ले उतरते हुए फिर बोला–"शफीका! सीढ़ियों के बीच हूँ। ऊपर चढ़ना है या नीचे उतरना है?"

शफीका ने पहले जैसा ही जवाब दिया। हंगल ने हाथों में देखा। उसमें रोटी थी। इसलिए वह उतर आया।

"देखती हो न, रहमा? मेरे पति की यह हालत है।" शफीका ने कहा।

"अरी, बस! इसी बात के लिए चिंता करती हो? तुम्हारे पति तो लाख दर्जे बेहतर हैं। मेरे पति की हालत आंकर देखो तो।" यह कहकर शफीका को साथ ले रहमा अपने घर चली गयी। घर पहुँचते ही एक बर्तन में पानी डालकर अपने पति शिमोन के हाथ देकर कहा–"इस गेहूँ को आटा पिसवाकर ले आओ।"

शिमोन पानी के बर्तन को कल के पास ले जाकर उससे बोला–"इस गेहूँ का जल्दी आटा बनवा दो।"

कलवाले ने शिमोन को पागल समझकर उससे कहा–"अभी कल के लिए काम है। तुम उस सोनेवाले की बगल में जाकर लेट जाओ। आटा पिसते ही मैं तुमको जगा देता हूँ।" वहाँ पर कोई परदेशी सो रहा था। शिमोन उसकी बगल में लेटकर सो गया।

शिमोन जब गहरी नींद में था, तब उसे जगाकर कल के मालिक ने उसकी दाढ़ी कैंची से काट दी और परदेशी की टोपी उसे पहनाकर उसे नींद से जगाया और उसके हाथ बर्तन देकर कहा–"तुम्हारे गेहूँ के आटा पीसा गया। अब तुम घर चले जाओ।"

शिमोन के घर पहुँचते ही उसके भेस को देख रहमा या शफ़ीका ने भी उसे नहीं पहचाना। रहमा ने उससे पूछा–"तुम कौन हो? कहाँ से आते हो?"

"तुम दोनों में से मैं किसी एक का पति हूँ। तुम में से मेरी पत्नी कौन है? मैं पहचान नहीं पाता हूँ।" शिमोन ने कहा।

"हम तुमको नहीं जानतीं।" यह कहते रहमा ने उसके हाथ में आइना दिया।

शिमोन ने उसमें अपना चेहरा देखकर कहा–"उस 'कल' के मालिक गधे ने मुझे जगाकर आटा देने के बदले उस परदेशी को जगाकर उसे दे दिया। मुझे लगता है कि मैं अभी तक वहीं लेट कर सो रहा हूँ। मैं वहाँ जाकर उस गधे से कहूँगा कि गधे मुझे जल्द जगा दे।" यह कहते वह चला गया।

शफ़ीका ने समझ लिया कि उसके पति से रहमा का पति और बावरा है।

बाणासुर के नगर को देखनेवाले कृष्ण के पास पहुँचकर नारदजी ने कहा–"देखा, कृष्ण! इस नगर की रक्षा पार्वतीजी के साथ शिवजी स्वयं कर रहे हैं। इसलिए आप अपने कार्य की सफलता का उपाय सावधानी से सोचिये! आपको बहुत जागरूक होना है।"

इस पर कृष्ण ने मंदहास करते हुए उत्तर दिया–"नारद, हमारे कार्य में स्वयं शिवजी भी विघ्न डाले, फिर भी हमें प्रसन्नता ही होगी; लेकिन यह ख्याल रखो कि हम कभी भी पीछे लौटकर कार्य को असफल होने नहीं देंगे।"

ये शब्द कहते हुए श्रीकृष्ण नगर के द्वार तक पहुँचे और पांचजन्य निकालकर उसका नाद किया। इस नाद को सुनते ही बाणासुर की सेनाएँ महा समुद्र की भांति टूट पड़ीं।

कृष्ण, बलराम, प्रद्युम्न और गरुड़ ने राक्षस-सेनाओं पर हमला करके भयंकर युद्ध किया। उस युद्ध में कई लोग मर गये और बाक़ी लोग नगर में भाग गये।

भागनेवाली सेना को देख बाणासुर ने कहा–"राक्षस बंश में पैदा होकर, युद्धों में कुशल बने तुम लोग कायर बनकर भाग रहे हो? मालूम होता है कि मुझ पर तुम लोगों का यक़ीन नहीं है! मेरे मंत्री कुम्भाण्ड महा वीर है! हमारे साथ प्रमथगण हैं! ये दुश्मन हम लोगों के सामने किस खेत की मूली हैं? ठहरो!
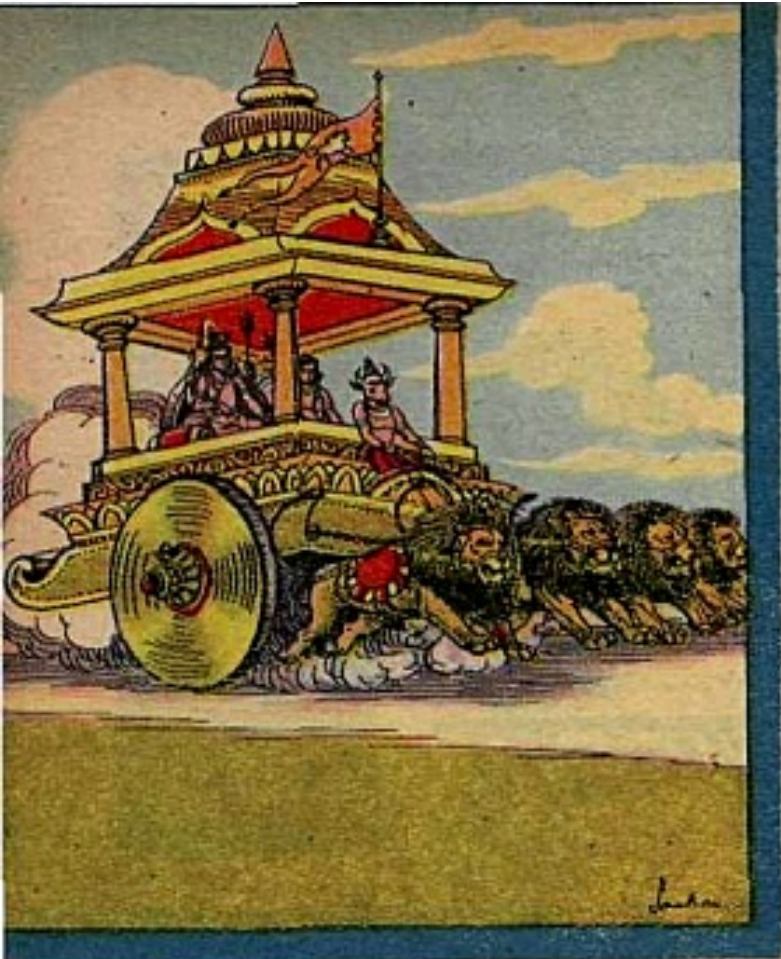
भाग न जाओ! खड़े हो जाओ!" कुम्भाण्ड ने भी भागने वालों को सावधान किया। फिर भी कोई फ़ायदा नहीं रहा। राक्षस-सेनाएँ भाग खड़ी हुईं।

अपने भक्त का इस प्रकार जो अपमान हुआ, इस पर शिवजी को बड़ा क्रोध आया। वे युद्ध के लिए तैयार हुए। सिंहों के जुते रथ पर वृषभ का ध्वज चमक रहा था। नन्दी को सारथी बनाकर, कुमारस्वामी को साथ लेकर, प्रमथ वीरों के साथ शिवजी युद्ध-भूमि के लिए रवाना हुए।

शिवजी और श्रीकृष्ण ने युद्ध प्रारंभ किया। युद्ध के शुरू होते ही शिवजी ने श्रीकृष्ण पर सौ बाण फेंके। इसके जवाब में श्री कृष्ण ने क्रोध में आकर ऐंद्रास्त्र का प्रयोग किया। उसमें से हज़ारों बाण निकले और शिवजी के रथ को ढक लिया। तब शिवजी ने आग्नेयास्त्र का प्रयोग किया, इससे चारों ओर ज्वालाएँ पैदा हो गयीं जो सब बाणों को जलाने लगीं। धीरे धीरे वे बाण श्रीकृष्ण, बलराम, प्रद्युम्न और गरुड़ को घेरने लगे। तब श्रीकृष्ण ने वारुणास्त्र का प्रयोग कर उन ज्वालाओं को बुझा दिया।

शिवजी ने क्रोध में आकर पाँच-छे दारुण अस्त्रों का प्रयोग किया, श्रीकृष्ण ने उनको काटने के लिए अनेक भारी अस्त्रों को छोड दिया। आख़िर मंत्र के साथ वैष्णव अस्त्र का प्रयोग किया। उस महास्त्र का सामना करने के लिए शिवजी ने बहुत ही क्रुद्ध हो युगांतक एवं प्रलय भयंकर पाशुपत अस्त्र बाहर निकाला।

शिवजी के उद्देश्य को समझकर श्रीकृष्ण ने बड़े वेग के साथ जृंभकास्त्र का प्रयोग किया। इससे शिवजी थक गये और जंभाइयाँ लेने लगे। उनके हाथ से धनुष और बाण छूटकर नीचे गिरे। देखते-देखते शिवजी बेहोश हो गये।

उसी समय बाणासुर भी युद्ध भूमि में आ पहुँचा। उसने शिवजी को होश में लाने की बड़ी कोशिश की, लेकिन फ़ायदा न रहा। ठीक उसी समय बड़े प्रतापी भगवन श्रीकृष्ण ने पांचजन्य का ऐसा नाद किया, सारी दिशाएं प्रतिध्वनित हो उठीं।

यह घटना देख प्रमथों को बड़ा गुस्सा आया। उन लोगों ने प्रद्युम्न को घेरकर हथियारों से ढक दिया। राक्षसों ने भी उस पर माया का युद्ध जारी किया। प्रद्युम्न ने क्रोध में आकर सम्मोहन विद्या द्वारा सब को निद्रित किया और कई राक्षसों को मार डाला।

इस बीच में कुमारस्वामी अपने पिता को युद्ध से विमुख देख उन्होंने खुद युद्ध करना शुरू किया। उन्होंने कृष्ण, बलराम और प्रद्युम्न से लड़ते हुए उनको घायल किया और वे भी खुद घायल हुए। कुमारस्वामी ने उग्र रूप धारण कर कृष्ण पर शिरोनामास्त्र का प्रयोग किया तो श्रीकृष्ण ने सुदर्शण चक्र से उसे काट डाला। इसके बाद श्रीकृष्ण ने कुमारस्वामी पर अपने चक्र का प्रयोग किया, वह कुमारस्वामी को लगने ही जा रहा था कि लंबादेवी नामक एक देवता नारी आकर कुमारस्वामी को ले गयी।
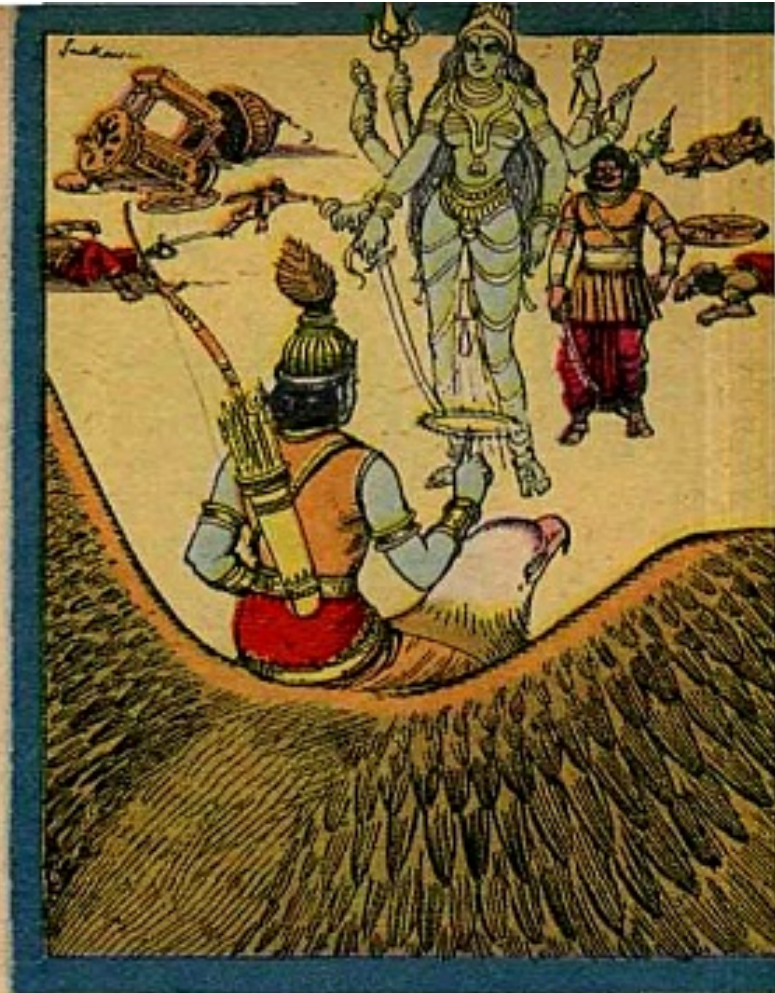
बाणासुर के जो अंगरक्षक थे, वे सब एक-एक करके इस तरह हट गये। अब उसे युद्ध के द्वारा अपने हाथों की खुजली दूर करने का अच्छा मौक़ा मिला। वह खुद कृष्ण से युद्ध करने मैदान में आया। उस लड़ाई में बाणासुर के रथ, हथियार टूटकर चूर-चूर हो गये और उसकी छाती में श्रीकृष्ण का बाण धँस गया, इससे वह बेहोश हो नीचे गिर पड़ा।

उस हालत में बाणासुर कृष्ण के चक्रायुध का बलि होने जा रहा था, तब बाणासुर

को बचाने शिवजी और पार्वती ने लंबादेवी को भेजा। वह बाणासुर के आगे आ खड़ी हुई। अदृश्य रूप में पार्वती भी वहीं पर खड़ी हो गयीं।

उस वक्त कृष्ण ने उनको देख कहा– "देवी! ये सब षड़यंत्र क्यों करती हो? तुम क्या यह चाहती हो कि बाणासुर के आगे आकर खड़ी हो जाओगी तो मैं अपने शत्रु को जान से छोड़ दूंगा?"

इस पर पार्वती बोली–"आप सब प्रकार से योग्य हैं। मैं आपको रोक भी नहीं सकती। लेकिन मैंने बाणासुर को अपने पुत्र के रूप में पाला है। कृपया मुझे पुत्र-शोक होने न दीजिये। इसकी रक्षा कीजिये।"

इस पर कृष्ण ने कहा–"देवी! यह अपने हज़ार हाथों को देख घमण्ड कर रहा है। इसके केवल दो हाथ रहने देकर बाक़ी हाथों को काटने पर ही इसका घमण्ड़ चूर हो जायेगा। तब इसका राक्षसत्व जाता रहेगा। इसलिए आप मुझे न रोकिये।"

पार्वती ने लंबादेवी को हट जाने का आदेश दिया। पार्वती के साथ लंबादेवी के भी ग़ायब होते ही कृष्ण ने अपने चक्रायुध का प्रयोग किया। उसने जाकर बाणासुर के सब हाथों को काट डाला, केवल दो हाथ रहने दिये और वह चक्र फिर कृष्ण के हाथ में लौट आया।

तब भी बाणासुर का पौरुष मरा न था। वह अपने बचे दोनों हाथों से ही कृष्ण पर बाणों की वर्षा करने लगा। कृष्ण ने क्रुद्ध होकर चक्रायुध निकाला। तब शिवजी अपने परिवार के साथ प्रत्यक्ष होकर बोले–"श्रीकृष्ण! यह मेरे संरक्षण में रहता है। आप इसको मारकर मेरे अभयदान को बेकार साबित न कीजियेगा; अपने चक्र का प्रहार न कीजिये।"

श्रीकृष्ण ने बाणासुर का संहार करना छोड़ दिया। शिवजी की स्तुति करके गरुड़ पर सवार हो अनिरुद्ध के पास चले गये। नंदीकेश्वर ने बाणासुर को शिवजी के पास पहुँचा दिया। शिवजी ने उसकी पीड़ा दूर की और उसे प्रमथ गणों में नंदी के समान एक अच्छा पद दिया। बाणासुर का नाम महाकाल के रूप में बदल गया। शिवजी अंतर्धान हो गये।

जब वे लोग अनिरुद्ध के पास पहुँचे तब गरुड़ को देखते ही सर्पों के रूप में बंधित सभी बाण फिर बाणों का रूप धरकर नीचे गिर गये। उस समय वहाँ पर नारद आये, चित्ररेखा भी आ पहुँची। कृष्ण, बलराम और प्रद्युम्न ने अनिरुद्ध को गले लगाया। अनिरुद्ध ने सबको विनयपूर्वक नमस्कार किये।

नारद ने कृष्ण की ओर देखते हुए कहा—"अब विलंब क्यों करते हैं? अनिरुद्ध का विवाह कीजिये।"

मुहूर्त भी निकट है। कुम्भाण्ड ने विवाह की सारी तैयारियाँ कीं और कृष्ण के पास पहुँचकर नमस्कार करते हुए कहा—"आप मुझ पर अनुग्रह करके मेरी रक्षा कीजिये।"

कृष्ण ने तब कुम्भाण्ड से कहा—"मैंने सुना कि तुम योग्य व्यक्ति हो, बाणासुर का सर्वस्व तुम्हीं लेकर निश्चित हो उसका अनुभव करो।"

इसके बाद उषा और अनिरुद्ध का वैभव के साथ विवाह हुआ। कृष्ण ने वर-वधू को शिव-पार्वती के पास ले जाकर नव-दंपति से उनको नमस्कार कराया। उस आदि-दंपति ने नव-दंपति को आशीर्वाद दिये। पार्वती ने अनिरुद्ध के लिए वाहन के रूप में बाणासुर का मयूर वाहन दिया।

श्रीकृष्ण जब रवाना हुए तब कुम्भाण्ड बोला—"बाणासुर की गायों की रेवड़ें वरुण
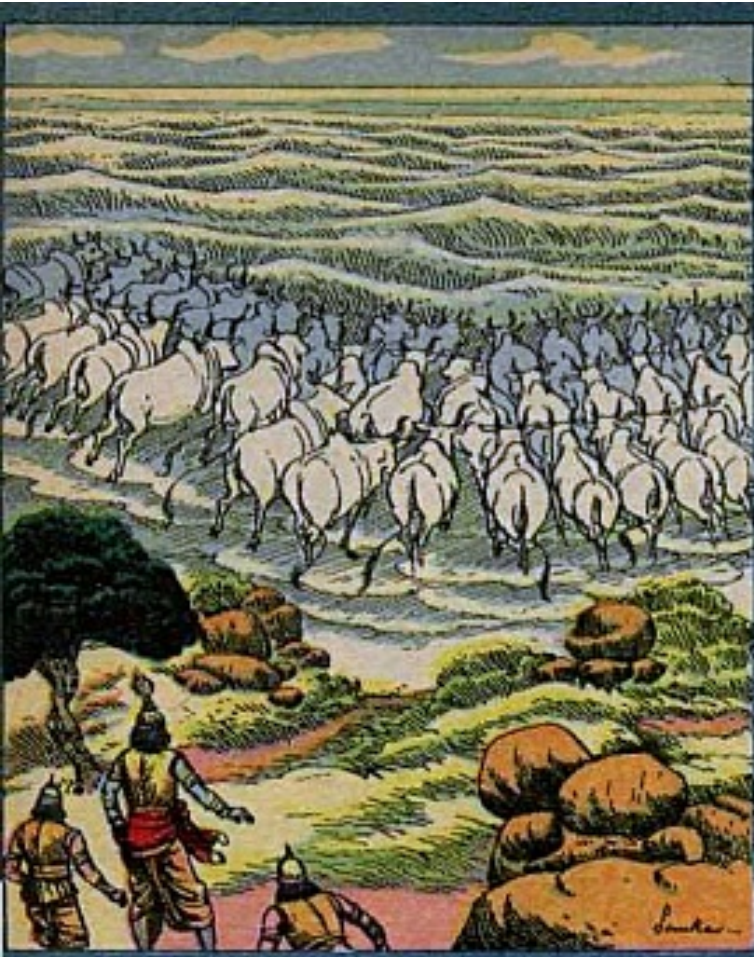
के पास हैं। उनके दूध पीने से अपार बल होता है। उनको आप अपने अधीन कर दीजिये।"

फिर क्या था, कृष्ण अपने साथ में भाई और पुत्र को लेकर गरुड़ पर सवार हुए। पश्चिमी समुद्र तट पर वेग से पहुँच कर वहाँ पर जंगलों में घूमनेवाली गायों को लाखों की तादाद में देखा। गायों को पालतू बनाना उनको बचपन से ही अच्छी तरह मालूम था। इसलिए ज़मीन पर उतर कर गायों के पास पहुँचे। गायों ने उनकी किसी प्रकार की परवाह नहीं की। वे सब जल्दी जल्दी समुद्र में जाकर ग़ायब हो गयीं।

कृष्ण ने निराश होकर गरुड़ से कहा—"मेरा प्रयत्न असफल हो गया। अब क्या करना है?"

"करना क्या, वरुण के साथ युद्ध करना ही एक मात्र उपाय है।" गरुड़ ने सलाह दी। गरुड़ ने अपने पंख फड़फड़ाये। तब समुद्र का सारा पानी हट गया और उसके नीचे नाग लोक भी साफ़ दिखायी देने लगा। श्रीकृष्ण ने वरुण के निवास पर हमला किया। दूसरे ही क्षण शंख बजाते ६६ रथों पर वरुण के सैनिक कृष्ण पर चढ़ आये। कृष्ण ने उनके साथ भीषण युद्ध किया। उनकी मदद करते बलराम और प्रद्युम्न ने भी युद्ध किया। गरुड़ ने भी उनकी सहायता की। वरुण के सैनिक युद्ध के मैदान से भाग खड़े हुए।

"कृष्ण की ऐसी हिम्मत?" यह कहते वरुण क्रोध में आकर कृष्ण से युद्ध करने खुद आ पहुँचा। उस लड़ाई में कृष्ण ने वैष्णवास्त्र का प्रयोग किया, तब शिथिल होकर वरुण कृष्ण से क्षमा मांगने आया।

इस पर कृष्ण ने जवाब दिया—"मेरी शरण मांगने से कोई फ़ायदा नहीं। पहले तुम बाणासुर की सब गायों को मेरे आधीन करो।"

"आप यह न पूछिये। मैंने बाणासुर को यह वचन दिया है कि तुम इन गायों को मेरे अधिकार में दे रहे हो! इसके बदले में अपने प्राणों के रहते युद्ध करूँगा, पर किसी को सौंपूंगा नहीं। मैंने सच्ची बात बतायी। अब आप जैसा उचित समझें, कीजिये।" वरुण ने उत्तर दिया।

श्रीकृष्ण ने गायों को वहीं छोड़ अपने दिव्यास्त्र को वापस ले लिया। वरुण ने श्रीकृष्ण और उनके परिवार का उचित रूप से स्वागत-सत्कार कर भेज दिया।

वरुण से विदा लेकर कृष्ण, बलराम, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध के साथ गरुड़ वाहन पर सवार हो अपने नगर में पहुँचे और विजय-सूचक के रूप में पांचजन्य का नाद किया। यह नाद सुनकर यादव-प्रमुख सदल-बल कृष्ण का स्वागत करने आगे बढ़े। कृष्ण उनके आने के पहले नगर के बाहर एक उद्यान वन में उतरे और विहार करने लगे। उनके साथ इंद्र आदि देवता भी थे। यादव उन सबको रथों पर बड़े वैभव के साथ नगर में ले गये। कृष्ण की विजय की सूचना पाकर नगर की प्रजा राज-मार्गों पर आ खड़ी हुई।

वे सब परस्पर यह वृत्तांत कहते-सुनते थे कि कृष्ण ने शोणपुर में अग्नियों पर कैसे विजय प्राप्त की, शिवजी को कैसे झुकाया, पार्वती की प्रार्थना सुन कैसे बाणासुर के प्राण बचाया, बाण के हाथ काट कर जान से उसे कैसे छोड़ दिया वगैरह बातों को सुनते कृष्ण को आपार आनंद होने लगा।

सारा नगर सजाया गया था। नगर में पहुँचते ही कृष्ण अपने भवन में चले गये। उषा और अनिरुद्ध भी अपने महल में पहुँचे।

अरण्य पुराण

[३०]

मौवली बचकर जब भाग निकला, तब शुनकों ने उछलकर उसका पीछा करना शुरू किया।

मौवली बड़ी आसानी से थकावट के बिना दौड़ने लगा। जब मधुमक्खियों के छत्ते निकट आये, तब उसने अपनी सारी ताक़त लगाकर निश्चय किया।

मधुमक्खियाँ उस धुंधली रोशनी में सो गयीं। क्योंकि उस मौसम में सूर्यास्त के बाद फूल नहीं खिलते। फिर भी जब मौवली मधुमक्खियों के छत्तों से थोड़ी दूर पर ही रहा, तभी उसे उनका कोमल झंकार सुनाई देने लगा। तब वह पूरे वेग से दौड़ने लगा। दौड़ते वक़्त उसने उन पत्थरों को पैरों से हटा दिया जिनके उसने ढ़ेर लगा रखे थे। वह कोमल झंकार भयंकर रूप धारण करने लगा। हवा में मधुमक्खियाँ काले बादलों की भाँति दिखायी देने लगीं। नीचे गहरी वाइनगंगा बह रही थी। उसमें कावा का सर 'डायमंड' के आकार में दिखायी पड़ा।

मौवली एक छलांग में नदी में कूद पड़ा। बे पूँछ के कुत्तों का नेता झपटकर उसे काटने का यत्न करने लगा। मौवली अपनी विजय पर फूला न समाया। उसके बदन पर मधुमक्खी का एक भी चिह्न न था। सब उसकी योजना के अनुसार संपन्न हो गया। लहसुन की गंध ने मधुमक्खियों से उसकी रक्षा की।

मौवली जब पानी पर तैर गया, तब कावा का शरीर उसे अपनी लपेट में लेने को तैयार था। पहाड़ी छोर पर से शुनकों के शरीर घाटी में दिखायी देते थे। वे देखने में मधुमक्खियों के छत्तों जैसे थे।

अन्तिम पृष्ठ

मौवली के पुनः साँस पाने तक कावा वहीं रहा, तब बोला–"मधुमक्खियाँ बहुत नाराज़ मालूम होती हैं। हमारा यहाँ रहना खैरियत नहीं है। चलो, जल्द यहाँ से निकल भागें।"

मौवली अपनी छुरी को हाथ में ले धारा के साथ तैरने लगा। जहाँ तक हो सके, वह पानी के अन्दर रहते तैरने लगा।

"खबरदार! पानी में जितने भी शुनक गिरे ह, सब मरे नहीं।" कावा ने उसे समझा।

"छुरी तैयार है।" मौवली ने जवाब दिया। उसे इस बात का आश्चर्य होने लगा कि मधुमक्खियाँ जलधारा के साथ चली आ रही हैं।

शुनकों की भीड़ में से आधे शुनक खतरे का ख्याल करके, इधर-उधर दौड़े और नदी में कूद पड़े। उनके भूँकने की आवाज़ सुनाई दे रही थी। जो शुनक अपनी जान बचा सके, वे मौवली के दगे को भूल न सके। पानी में गिरी मधुमक्यिाँ उनका पीछा कर रही थीं। मौवली के हाथ जो भी शुनक आया, उसे पकड़ कर छुरी से वह मार रहा है।

शुनक जब पानी के पास पहुँचे तब तक मधुमक्खियाँ ऊपर उड़ती जा रही थीं। लाशें पानी की धारा में बही जा रही थीं।

मधुमक्खियों का झंकार समुद्र के गर्जन जैसे अब भी सुनाई दे रहा था। ऊपर से शुनकों के भूँकने की आवाज़ आ रही थी। शुनकों में से कुछ ही घाटी में गिरकर धारा में बह गये। कुछ शुनक घाटी की दरारों में पड़कर मधुमक्खियों के शिकार हुये। कुछ शुनक पेड़ों पर उछलने की कोशिश करते मधुमक्खियों के हाथों में आ गये। उनके डंकों से घबराकर पानी में कूद पड़े।

"शांतिशिला" के निकट आते-आते सियोनी भेड़ियों की आवाज़ और स्पष्ट सुनाई देने लगी। शुनक अपने नेता से पूछ रहे हैं कि किनारे लग जाय तो अच्छा होगा। मधुमक्खियाँ वापस चली गयीं। "अब मैं भी चला जाता हूँ, भैया! मेरा भेड़ियों के साथ संबंध ही क्या है? शिकार खेलना है!" यह कहते कावा ने विदा लिया।

शुनक भीग गये। उनका उत्साह मंद पड़ गया। एक-एक करके किनारे पहुँचने लगे। लंगड़े पैर से लँगड़ाते 'एकाकी' बाहर ही रहा।

"शिकार का यह खेल अच्छा नहीं है।" एक शुनक ने हाँफते हुए कहा।

"बढ़िया शिकार है।" यह कहते मौवली उस शुनक पर कूद पड़ा, अपनी छुरी उसकी छाती में भोंक कर, शुनक के काटने से उसने अपने को बचा लिया।

"तुम ही मानव के बच्चे हो?" एकाकी चिल्ला उठा।

"मरे हुए शुनकों से पूछो; एकाकी! उनके मुँह धूल झोंक दी। उनके नेता की पूँछ काट दी। तुम्हारे वास्ते और कुछ बचे हैं।" मौवली ने कहा।

"आने दो!" एकाकी ने कहा।

भेड़िये की भीड़ और निकट आ गयी।

नदी जहाँ मोड़ लेती थी, वहाँ पर शुनक किनारे पर आ गये। यह उनकी भूल थी। उन्हें तो एक आधी मील की दूरी पर उनके इंतज़ार में भेड़िये क्रोध भरी आँखों से बैठे थे। एकाकी के दीखते ही उनके नेता ने शुनकों को किनारे पर जाने का आदेश दिया।

बड़ी भयंकर लड़ाई शुरू हुई। फिर भी शुनकों की संख्या भेड़ियों की तादाद से दुगुनी थी। मगर भेड़िये अपनी जान लगा कर लड़ने तैयार थे। उनमें औरतें और बच्चे भी थे।

लड़ाई में शुनक पेट चीर डालते हैं तो भेड़िये गले काट देते हैं, नहीं तो बगलें चीर देते हैं। पानी में से कंठ उठाये बाहर आनेवाले शुनकों के कंठ भेड़ियों को आसानी से मिल गये। लेकिन पानी से बाहर आते ही शुनकों का बल बढ़ गया।

लड़ाई को देखनेवाले मौवली के चारों बड़े भाई शुनकों पर टूट पड़े। उन पर जो शुनक कूदने को तैयार थे, उनको मौवली ने अपनी छुरी की बलि दे दी। वृद्ध अकेला, अधमरा एकाकी, नये नेता फावो ने बड़ी बीरता के साथ युद्ध किया। शुनक नेता आखिर बचते-बचते एकाकी के हाथ आया। मौवली उसकी मदद करने पहुँचा तो उसने कहा—"ठहरो, यह मेरा हिस्सा है।"

एकाकी महान वीर है। शुनक नेता को मार कर वह तब मरा। एकाकी के मरते ही मौवली ने भेड़ियों को सचेत करते हुए गर्जन किया—"एक शुनक को भी जान से मत छोड़ो।" अकेला प्राण छोड़ने के पहले ही मौवली को दिखायी दिया।

"मैंने पहले ही कहा था कि यह मेरी आखिरी लड़ाई है। आज अगर तुम न होते तो इस भीड़ में एक भी बचा न होता। तुम अब अपने लोगों के पास चले जाओ। सब ॠण चुक जायेंगे।" अकेला ने कहा।

मौवली ने अकेले के शरीर को थाम कर पकड़ लिया। एक समय अकेला उस दल का नेता था, अब वह मृत्यु-गीत गाने लगा। उसके कंठ की ध्वनि बढ़ती गयी। वह नदी के उस पार बहुत दूर तक सुनाई दे रही थी।

"शिकार होना है।" यह कहते अकेला अपनी सारी ताक़त लगा कर चिल्ला उठा और हवा में उछल कर औंधे मुँह गिर गया। उसके प्राण ऊपर ही उड़ गये।

उस रात को जो लड़ाई हुई, उसमें एक भी शुनक जान से बच न पाया।

८४. प्राचीन अलेप्पो दुर्ग

सिरिया का यह दुर्ग एक पहाड़ पर निर्मित हो अनेक शताब्दियों से दुर्भेद्य ही रहा। इस्लाम तथा ईसाइयों के युद्धों के समय ईसाई सेनाओं ने इस दुर्ग को घेरा, पर वे जीत नहीं पायीं। हिट्टैटों के समय से, ईजिप्ट के फाराशों के समय से भी, इस दुर्ग के वास्ते षड़यंत्र, युद्ध और हत्याकांड हुए। यह दुर्ग कई बार प्लेग और भूकंपों का शिकार हुआ। इसका इतिहास चार हज़ार वर्ष पुराना है। इसके मार्ग सब भूगर्भ सुरंग ही हैं।

Photo by A. V. Rangaiah
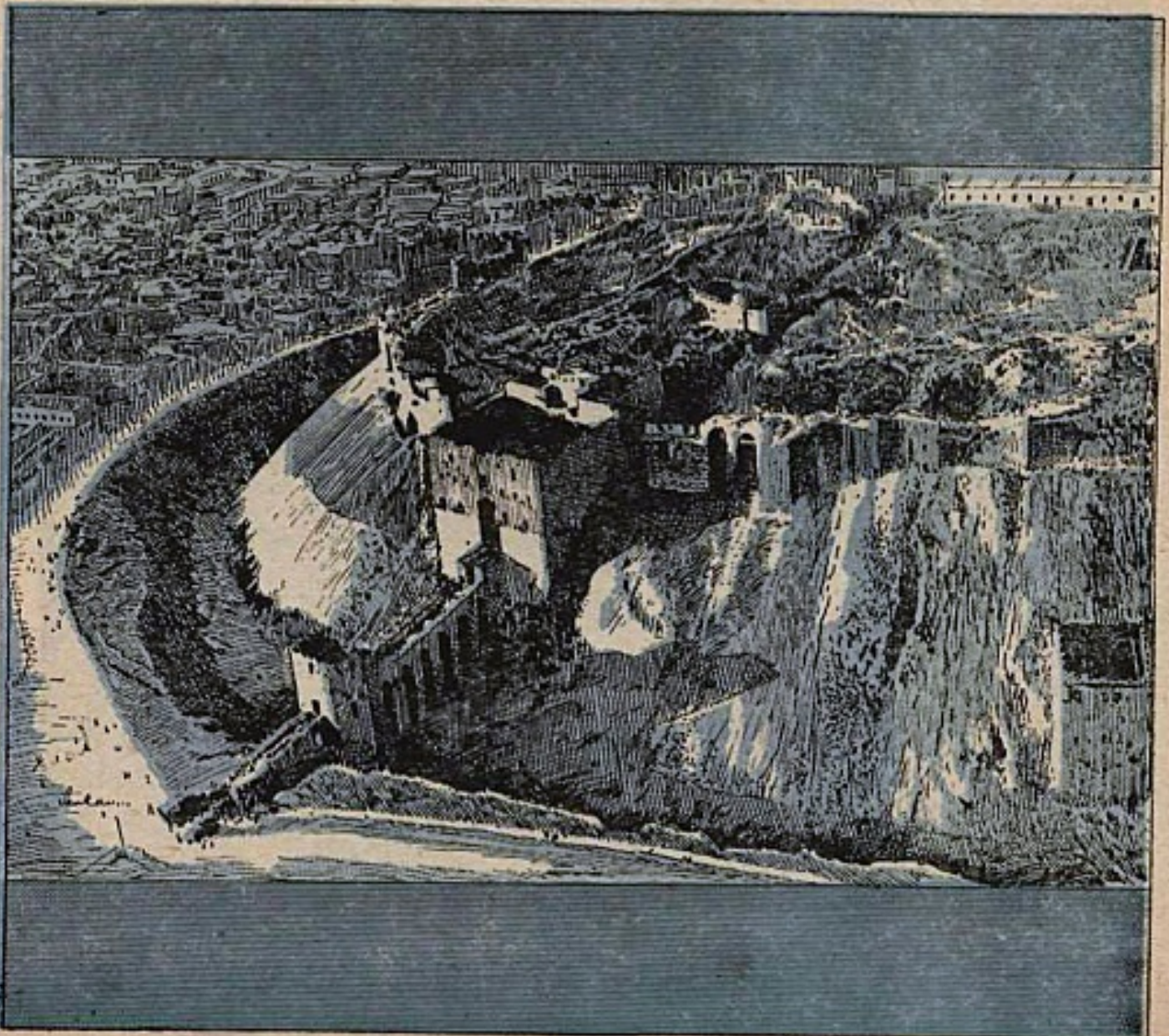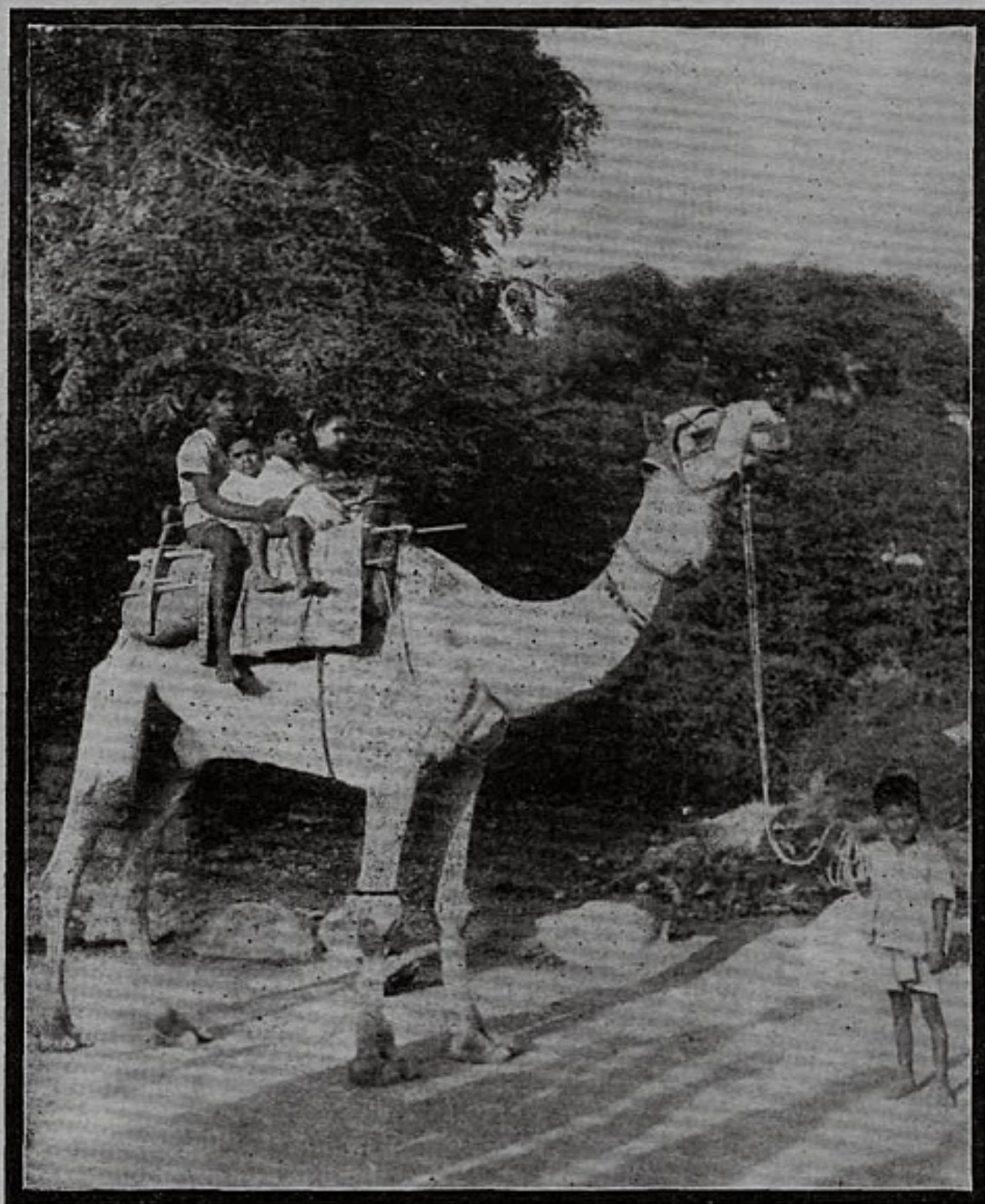
पुरस्कृत
परिचयोक्ति

चढ़े ऊँट पर मेरे साथी!

प्रेषिका :
रमा कुमारी

Photo by P. Jayaraj
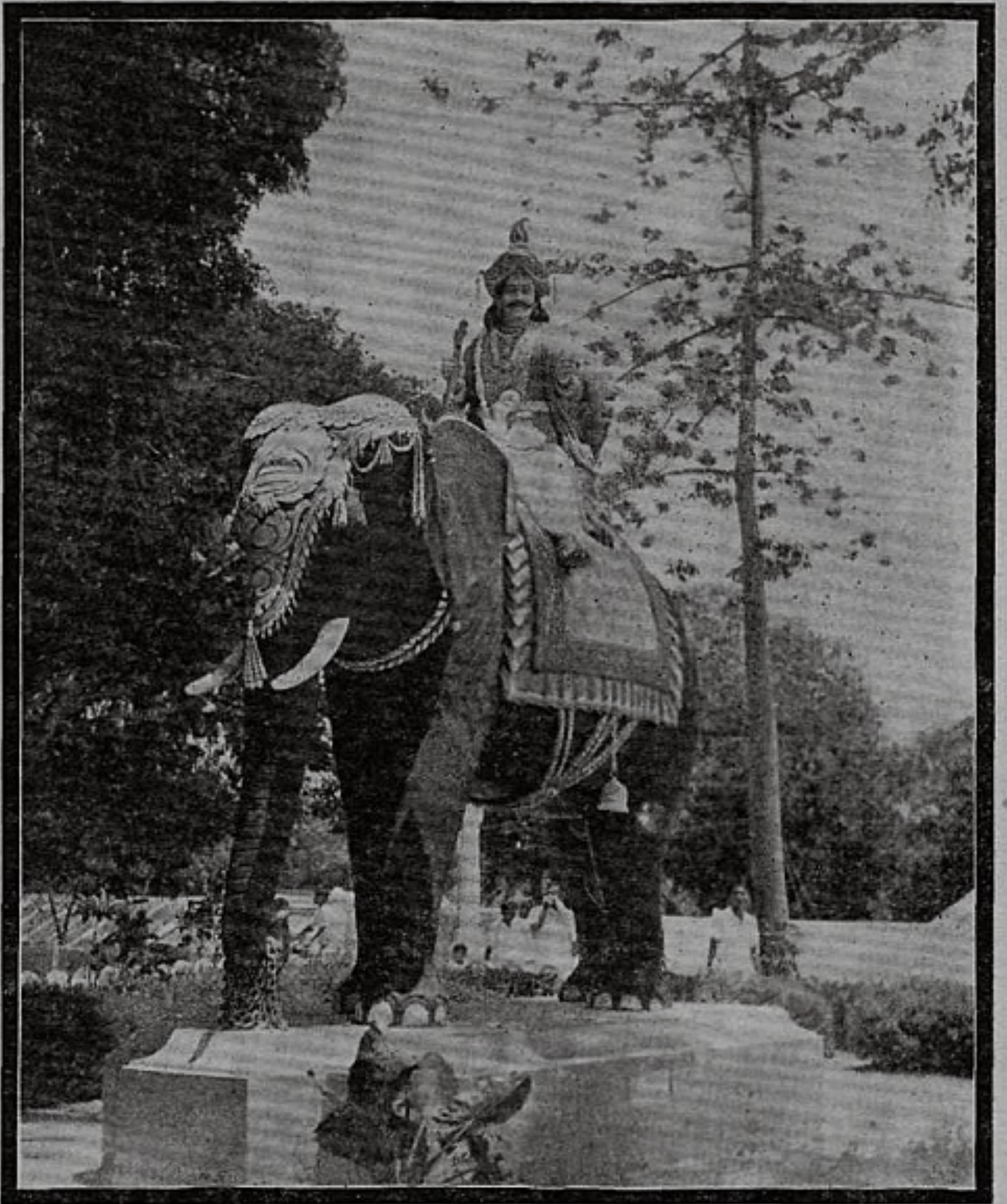
पुरस्कृत परिचयोक्ति

राजा लेकर आया हाथी !!

प्रेषिका : रमा कुमारी

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता

फरवरी १९६९ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें !

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिखकर निम्नलिखित पते पर तारीख ७ दिसम्बर १९६८ के अन्दर भेजनी चाहिए।

फ़ोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन,
वड़पलनी, मद्रास-२६

दिसम्बर – प्रतियोगिता – फल

दिसम्बर के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं।
इनके प्रेषिका को १० रुपये का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो: **चढ़े ऊँट पर मेरे साथी!**
दूसरा फ़ोटो: **राजा लेकर आया हाथी !!**

प्रेषिका : **रमा कुमारी,** द्वारा : शिक्षक पन्नालालजी कुमावत, लालचौकी चार भुजा का मन्दिर, कुमावतों का मोहल्ला, कॉकरोली, पो. जिला उदयपुर (राजस्थान)

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Sarada Binding Works, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

दिलीप और उसके साथी
मछली पकड़ने चले (२)
एकदिन शाम को दिलीप और उसके साथी मछली पकड़ कर लौट रहे थे। अचानक उन्होंने रेल लाइन से फिशप्लेट गायब देखा...अब अगर ट्रेन आ जाये तो वे कैसे संकेत देंगे?
सुरेश, ज़रा मेरी बात तो सुनो! अपनी लाल कमीज़ मुझे दे दो।
क्यों, क्या हम शरीर सुडौल बनाने की प्रतियोगिता कर रहे हैं।
अभी बकवास करने का समय नहीं है! लाओ मछली पकड़ने की बंसी मुझे दे दो!
लेकिन इसे खड़ा कैसे रखोगे?
मैं खतरे का एक लाल सिगनल बना रहा हूँ। अगर कोई गाड़ी आई तो दुर्घटना होने से पहले ही रुक जायगी।
हम ज़मीन खोदेंगे।
लेकिन ड्राइवर कैसे समझेगा कि यह खतरे वाला लाल सिगनल है?
चिन्ता मत करो— 'एवरेडी' टॉर्च भी अपने पास है! मैं इस टॉर्च की रोशनी झंडे पर फेंकता रहूँगा—ताकि लाल चमक सिगनल पर बनी रहे।
आओ अब हम इन्तज़ार करें और देखें क्या होता है।
अगले सप्ताह: ट्रेन आ रही है—क्या उसे लाल सिगनल नहीं दिखाई देगा।
रोशनी तेज़, शक्ति भरपूर—है यही 'एवरेडी' ज़रूर!